Con. 3. VII. 25. 48
350

अंक 7
संख्या 25

सोमवार,
13 दिसम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्

के

वाद-विवाद

की

सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

पृष्ठ

विधान का मसौदा-(जारी)..... 1643-1713
[अनुच्छेद 43, 15, 44, 45 और 46 पर विचार]

भारतीय विधान-परिषद्

सोमवार, 13 दिसम्बर, सन् 1948 ई.

उपाध्यक्ष महोदय (डॉ. एच. सी. मुखर्जी) की अध्यक्षता में भारतीय विधान-परिषद् की बैठक कांस्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे समवेत् हुई।

विधान का मसौदा–(जारी)

अनुच्छेद 43–(जारी)

*__प्रोफेसर के.टी. शाह__ (बिहार : जनरल): श्रीमान्, मैं पेश कर चुका हूं..

.

*__श्री टी.टी. कृष्णामाचारी__ (मद्रास : जनरल): श्रीमान्, एक औचित्य प्रश्न है। क्या मैं यह जान सकता हूं कि प्रो. शाह फिर उस योजना को रख सकते हैं या नहीं जिसकी रूपरेखा उन्होंने पहले एक अथवा दो संशोधनों में प्रस्तुत की थी और जिन सब संशोधनों को इस सभा ने अस्वीकार कर दिया था? वे वास्तव में अपने इन सब संशोधनों में एक विशिष्ट योजना पर अड़े हुये हैं। क्या ये माननीय सदस्य इस संशोधन को नियमानुसार पेश कर रहे हैं?

*__प्रोफेसर के.टी. शाहः__ इस औचित्य प्रश्न पर मेरा उत्तर स्पष्ट है। मैं जानता था कि यह आपत्ति होगी और इसलिये मैंने अपने संशोधन का शब्द-विन्यास इस प्रकार का रखा है कि यह विशिष्ट आपत्ति लागू न हो सके। सरकार के विभिन्न अंगों में परस्पर शक्तियों के पूर्ण पार्थक्य का सिद्धान्त अस्वीकार किया जा चुका है। चाहे इन शक्तियों का पार्थक्य न हो और चाहे प्रधान की कुछ भी शक्तियां क्यों न हों तो भी उनसे प्रधान के जनमत द्वारा चुने जाने में कोई बाधा नहीं पड़ती। जब तक यह इच्छा न हो कि मुझे कोई संशोधन पेश करने की आज्ञा न दी जाये तब तक मैं नही समझता कि ऐसी आपत्ति क्यों उठाई जाती है। मैं इसका निर्णय अध्यक्ष पर छोड़ता हूं। श्रीमान्, मैं पूर्णतया आपके अधिकार में हूं। मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य की आपत्ति लागू हो ही नहीं सकती। इस आपत्ति के कारण

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

ही तो मैंने अपने प्रत्येक संशोधन के शब्द-विन्यास को इस प्रकार से रखा है कि...

***उपाध्यक्ष** (डॉ. एच. सी. मुखर्जी): प्रो. शाह इस संशोधन को नियमानुसार पेश कर रहे हैं।

***प्रो. के.टी. शाह:** श्रीमान्, मैं पहले ही पेश कर चुका हूं:

"कि अनुच्छेद 43 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये :

'43. The President shall be elected by the adult citizens of India, voting by secret ballot, in each constituent part of the Union.' "

(43. प्रधान भारत के प्रौढ़ नागरिकों द्वारा चुना जायेगा और वे संघ के मूलभूत अंगों में गूढ़शलाका के द्वारा मतदान करेंगे।)

मूल अनुच्छेद निर्वाचन निकाय द्वारा प्रधान के निर्वाचन की व्यवस्था करता है। उस निर्वाचक निकाय में केन्द्रीय विधान-मंडल तथा प्रान्तीय अथवा रियासतों के विधान-मंडलों के सदस्य होंगे। मेरे विचार में इस रीति से लोक-इच्छा का यथेष्ट प्रतिनिधान नहीं होगा। अत: कम से कम मैं तो इस आग्रह पर अड़ा हुआ हूं कि लोकेच्छा को सर्वोपरि माना जाये।

मुझे यह आवश्यकता प्रतीत हुई है कि जहां भी मैं ऐसा करा सकूं वहीं अन्य बातों के अतिरिक्त यह भी कराने का प्रयत्न करूं कि प्रभुतासम्पन्न जनसाधारण को इस विधान में स्थान मिले, चाहे फिर आप ऐसा होना पसंद करते हों या नापसंद और मैंने यह भी चाहा है कि जनसाधारण को यह अवसर प्राप्त हो कि वह अपनी बात को मनवा सके चाहे फिर यह बात आपको पसन्द हो या नापसंद। इसलिए मैं यह सुझाव रखता हूं कि राज्य के प्रधान का निर्वाचन में भाग लेने का प्रत्येक प्रौढ़ नागरिक को अधिकार हो, और इसके अनुसार उन विधान-मंडलों के सदस्यों द्वारा अप्रत्यक्ष निर्वाचन के स्थान में जिनका दो, तीन या चार वर्ष के पश्चात् निर्वाचन हुआ करेगा, मैं यह सुझाव रखता हूं कि प्रत्येक बार प्रधान का निर्वाचन हो और वह निर्वाचन स्वयं लोकमत द्वारा हो।

मैं इस संशोधन के दोनों पक्ष तथा विपक्ष के तर्कों को आपके समक्ष प्रस्तुत करूंगा। मैं इस प्रकार की बातों के सुनने का आदी हो गया हूं कि मेरा संशोधन ठीक समय पर नहीं रखा गया, या यह स्थान उसके लिए ठीक नहीं है या एक और तीसरा तर्क यह कि "मैं इसका विरोध करता हूं"। मेरे तर्कों के ये तीन उत्तर हैं। इनके प्रत्युत्तर में मेरी यह धारणा है कि इस संशोधन को प्रस्तुत करने के लिए यही समय है और यही स्थान है और तर्करहित विरोध पर तो मैं ध्यान ही नहीं देता हूं।

जिस बात को मैं रखना चाहता हूं वह यह है। एक बार पहले यह कहा गया था कि सिद्धान्त के निश्चित कर लेने के पश्चात् यह संशोधन आज एक अन्य रूप में प्रस्तुत किया गया है इसलिये इस पर विचार न किया जाये। श्रीमान्, मैं आपसे यह पूछता हूं और आपके द्वारा सभा से यह पूछता हूं कि यदि कोई इस विचार को उस समय रखता जब कि विधान के सामान्य सिद्धान्तों पर विचार किया गया था तो क्या वह अनुचित होता? मैं सभा से यह निवेदन करूंगा कि मैं जिस बात को इस समय रख रहा हूं उसके बारे में शान्त चित्त से विचार करते समय यह ध्यान में रखें कि 14 या 15 मास पूर्व जब हमने उन सिद्धान्तों पर विचार किया था, जो मूल सिद्धान्त कहे जाते हैं और जो मूल सिद्धान्तों के अतिरिक्त और कुछ नहीं हैं, उस समय हम परेशानी में थे और कठिन परिस्थितियों में से गुज़र रहे थे और ऐसे प्रभावों के वशवर्त्ती थे जिनके प्रति मैं यह कहने का साहस करता हूं कि उनसे हमारे विचार दूषित हो गये थे और हमारा दृष्टिकोण विषम हो गया था; अत: हमने उन विचारों का समर्थन किया था और उनको स्वीकार किया था जो मेरी सम्मति में जीवन के प्रत्येक पहलू के लिये सच्चे, वास्तविक और क्रियान्वित किये जाने योग्य प्रजातन्त्र की विचारधारा से न तो तब संगत थे और न अब हैं। यदि आप उससे पीछे हटना चाहते हैं तब तो मुझे कुछ भी नहीं कहना हैं। 15 माह के पश्चात् हम अब ऐसी स्थिति में हैं कि उस परिस्थिति पर अधिक गम्भीर, स्थिर तथा निष्पक्ष विचार कर सकें। अत: यदि हम अपने आदर्शों पर दृढ़ हैं, यदि हम उन सिद्धान्तों पर अटल हैं जिनकी हमने उच्च स्वर में घोषणा की है, यदि हम उन नारों में विश्वास करते हैं जिनके ज़रिये हमने प्राचीन साम्राज्यवादी शासन-अधिकारियों से चले जाने के लिये देश की सन्तानों के लिये स्थान रिक्त करने के लिये कहा था तो, श्रीमान्, मेरा आपसे

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

निवेदन है कि इस संशोधन को सभा के समक्ष प्रस्तुत करने में कोई बात अनुचित नहीं की जा रही है तथा यह नियम-विरुद्ध ही है। फिर भी यह सभा के निर्णय करने की बात है। मैं केवल सभा के समक्ष उन विचारों को प्रस्तुत करना चाहता हूं जिनके बल पर वह मेरे दृष्टिकोण को स्वीकार कर सकती है।

यदि इस मसौदे को इस रूप में समझा जाता है कि यह सभा में रखे जाने वाले किसी विधेयक पर सिलेक्ट कमेटी की रिपोर्ट के समान है तो भी मेरा यही कहना है कि इस दशा में मसौदे के इस रूप पर भी किसी सदस्य को अपने विचार प्रकट करने का अधिकार है। मैंने नियमों का अध्ययन किया है। उनके अनुसार सभा के समक्ष सिलेक्ट-कमेटी की रिपोर्ट आने पर भी कोई सदस्य विधेयक के सिद्धान्त पर प्रश्न किये बिना, रिपोर्ट द्वारा उद्भूत कारणों के आधार पर यह कह सकता है कि पूरी रिपोर्ट को वापस कर दिया जाये और इस सूरत में मसौदे के लिए भी यही कहा जा सकता है।

तीसरी बात यह है कि जहां तक मैं इन सिद्धान्तों को समझता हूं जो आपने स्वीकार किये हैं, लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव में दिये हुए हैं और जो कुछ मैं यहां कह रहा हूं उसमें कोई ऐसी बात नहीं है जिसके लिये यह कहा जा सके कि हम उस प्रस्ताव से पीछे हट रहे हैं। लक्ष्य-सम्बन्धी प्रस्ताव हमें इस बात का आश्वासन देता है कि हमारा राज्य प्रजातंत्रात्मक, असाम्प्रदायिक, प्रभुतासम्पन्न गणतंत्र है। मेरे संशोधन से इन बातों के बारे में कोई कठिनाई पैदा नहीं होगी। शेष अन्य बातें विवरण सम्बन्धी होने के कारण गौण हैं।

इन तीन कारणों से यह आपत्ति कि इस संशोधन के लिए न तो यह उपयुक्त समय है और न यह उपयुक्त स्थान पर हो जानी चाहिये। यह निश्चित बात है कि प्रधान, चाहे आप उनकी पद-अवधि तीन वर्ष की रखें, चार वर्ष की रखें या पांच की, जब तक कि वह किसी ऐसे अपराध के दोषी नहीं हैं जिसके कारण उन पर अभियोग चलाया जा सकता है और उनको हटाया जा सकता है तब तक वह इस अवधि के लिये केवल योजना के अन्तर्गत सरकार के ही मुखिया नहीं होंगे परन्तु जैसा कि श्री त्यागी ने उस दिन संकेत किया था, उनमें लोक की प्रभुता भी निहित होगी।

सामूहिक रूप में लोक-प्रभुता का घर और बाहर प्रतिनिधान करते हुये उनकी स्थिति ऐसी होनी चाहिये कि वे लोगों को, चाहे वे बहुमत में हों चाहे अल्पमत में, विश्वासपात्र हों। मेरा विचार तो यह है कि एक बार निर्वाचित होने पर प्रधान किसी दल का भी सदस्य नहीं रह सकता है जिस प्रकार से इस सभा का प्रधान किसी दल का सदस्य नहीं है। इसलिये मैंने केवल यह सुझाव रखा है कि प्रधान समस्त भारतीय संघ का प्रधान होगा और प्रत्येक नागरिक उसका समान रूप से आदर तथा सम्मान करेगा और उसकी आज्ञा का पालन करेगा, फिर चाहे निर्वाचन के समय उस व्यक्ति ने उसके पक्ष में मत दिया हो अथवा नहीं।

इस दृष्टि से विचार करते हुये मेरी यह धारणा है कि हमें प्रधान को उस प्राधिकार से सम्पन्न कर देना चाहिये कि वे यह कह सकें कि मैं लोगों का प्रतिनिधान करता हूं। उनके सम्बन्ध में यह कहने से कोई लाभ नहीं है कि प्रधान-मंत्री अथवा सभा में बहुमत के दल और जनता द्वारा चुने गये प्रधान में परस्पर विरोध उत्पन्न हो जायेगा। ऐसे विरोध का उत्पन्न होना आवश्यक नहीं है। प्रधान केवल सद्यस्कृत्यस्थिति में ही प्रकार्य करेगा। उसका पद केवल शोभा के लिए ही नहीं है वरन् वह दूसरे देशों के प्रतिनिधियों की आंखों में देश का प्रतीक तथा प्रतिनिधि भी है। अत: यह बात सारहीन होगी। यदि आप यह कहें कि प्रधान तो प्रधान-मंत्री की प्रतिध्वनिमात्र ही होना चाहिये। अत: मैं चाहता हूं कि प्रधान राज्य का मुखिया हो और जनता के सामूहिक रूप का तथा उसकी प्रभुता का प्रतीक हो। अत: मेरी यह मान्यता है कि प्रधान केन्द्र में के अथवा स्थानीय विधान-मंडलों में के बहुमत के दल की कठपुतली नहीं है वरन् वह जनता का सच्चा प्रतिनिधि है और वह राज्य के मुखिया के रूप में कार्य करने तथा उसका प्रतिनिधान करने के लिए चुना गया हैं। यह तथ्य अकाट्य रूप से व्यक्त कर देता है कि उपरोक्त मतविभेद की कोई संभावना नहीं है। इस सच्चाई को ध्यान में रख कर मैं यह कह सकता हूं कि राज्य के मुखिया में तथा मंत्रिमंडल में पारस्परिक विरोध की सम्भावनाएं सैद्धान्तिक न होकर केवल मामूली कठिनाइयां हैं। जो कि ज़रा सी सद्बुद्धि तथा इस संविधान के सिद्धान्तों के प्रति सच्ची निष्ठा रख कर काम करने से तथा इस संविधान के रचयिताओं के ईमानदारी से कार्य करने से

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

आसानी से सुलझाई जा सकती है। मैं तो यही ठीक समझता हूं कि किसी अप्रत्यक्ष चक्करदार विधि द्वारा प्रधान का निर्वाचन होने के स्थान में यदि प्रौढ़ मत द्वारा प्रधान का निर्वाचन हो तो बहुत अच्छी बात होगी। आपकी संसद् तो किसी समय भी भंग हो सकती है। यह ठीक है कि लोक-सभा की अधिकतम् अवधि चार उस पांच वर्ष की है परन्तु साथ ही यह भी प्रावधान है कि उसको उस अवधि की समाप्ति से पूर्व किसी समय भी विलीन किया जा सकता है। इसके विपरीत प्रधान का चुनाव एक नियत काल के लिये होता है। अत: वह दलबन्दी के झगड़े से बाहर रहेगा, क्षणिक उतार-चढ़ाव अर्थात्, संसद् के भाग्य के उलट-फेर से स्वयं अप्रभावित रहेगा और इस बात की पूरी आशा की जा सकती है कि वह संतुलन रख सकेगा और शासन को इसी मात्रा में स्थायी तथा दृढ़ बना सकेगा जितनी कि दलबन्दी के पारस्परिक विद्वेष के कारण उसमें अन्यथा होगी। अत: मैं इस संशोधन को प्रस्तुत करता हूं और विश्वास करता हूं कि इसके औचित्य पर विचार किया जायेगा न कि केवल औचित्य सम्बन्धी प्रश्न की वक्रोक्तियों पर।

(संशोधन संख्या 1054, 1061 और 1067 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1056, 1058, 1060 और 1068 समानार्थी हैं, और उनको एक साथ लिया जा सकता है।

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार: मुस्लिम): उपाध्यक्ष, श्रीमान मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 43 के खंड (ख) में से 'elected' (निर्वाचित) शब्द निकाल दिया जाये।"

इस अनुच्छेद द्वारा प्रधान के निर्वाचन के लिए हम एक निर्वाचक निकाय बना रहे हैं। यह कहा गया है कि प्रधान का निर्वाचन एक ऐसे निर्वाचन निकाय के सदस्य करेंगे जिसमें (क) संसद् के दोनों आगारों के सदस्य तथा (ख) राज्य के विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्य होंगे। मैं चाहता हूं कि (ख) में से 'निर्वाचित' शब्द को निकाल दिया जाये। इस शब्द को निकालने के लिये मेरे ये तर्क हैं।

प्रधान के निर्वाचन में क्या हम पूरी तरह से प्रजातन्त्रात्मक विधि का पालन करने का विचार रखते हैं अथवा हम किसी प्रकार की साम्राज्यवादी विचारधारा से प्रेरित हो रहे हैं? यदि हम 'निर्वाचित' शब्द को निकाल दें तो मैं सभा को यह आश्वासन देता हूं कि इस सम्बन्ध में हम और भी अधिक प्रजातन्त्रात्मक विधि का पालन करेंगे क्योंकि दोनों आगारों के सदस्य या तो चुने जाते हैं या नामजद किये जाते हैं, परन्तु जहां तक विधान-मंडल के कार्य का सम्बन्ध है, इन सदस्यों को समान अधिकार तथा विशेषाधिकार होने चाहियें। अत: यह बड़ा अनुचित-सा प्रतीत होता है कि सदस्यों में परस्पर कोई भेद-विभेद किया जाये। चाहे सदस्य निर्वाचित हो या नामज़द जहां तक प्रधान के निर्वाचन के लिये मत देने का सम्बन्ध है, उसे समान अधिकार तथा विशेषाधिकार होना चाहिये। इस प्रकार मेरे विचार से हम अपने कार्यों में प्रजातन्त्रात्मक विधि के अधिक निकट पहुंच जायेंगे। इसलिये मैं निवेदन करता हूं कि जो संशोधन मैंने पेश किया है उस पर यह सभा तथा माननीय प्रस्तावक उचित विचार करेंगे और उसे स्वीकार करेंगे। इन शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन पेश करता हूं।

*__श्री तजम्मुल हुसैन__ (बिहार : मुस्लिम): उपाध्यक्ष, श्रीमान्, मैं प्रस्ताव रखता हूं:

> "कि अनुच्छेद 43 के खण्ड (क) में 'the members' (सदस्य) शब्द के स्थान में 'the elected members' (निर्वाचित सदस्य) शब्द रखे जायें।"

मैं अनुच्छेद 43 को आपको पढ़ कर सुनाता हूं। उसमें दिया हुआ है "प्रधान का निर्वाचन एक ऐसे निर्वाचक निकाय के सदस्य करेंगे जिसमें (क) संसद् के दोनों आगारों के सदस्य तथा (ख) राज्यों के विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्य होगें।" खण्ड (क) में कहा गया है कि प्रधान का निर्वाचन संसद् के दोनों आगारों के सदस्य करेंगे। उत्तर-आगार में नामज़द सदस्य हैं और अवर-आगार अर्थात् लोक-आगार में केवल निर्वाचित सदस्य होंगे। अत: इस अनुच्छेद से ऐसा प्रतीत होता है कि संसद् के दोनों प्रकार के निर्वाचित और नामज़द सदस्य प्रधान का निर्वाचन करेंगे। खण्ड (ख) में कहा गया है कि प्रधान का निर्वाचन प्रान्तीय

[श्री तजम्मुल हुसैन]

विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्य करेंगे। मैं नहीं समझ सकता हूं कि प्रान्तीय विधान-मण्डलों के केवल निर्वाचित सदस्य ही प्रधान के निर्वाचन में क्यों भाग लेंगे जब कि केन्द्रीय विधान-मण्डल के दोनों निर्वाचित तथा नामज़द सदस्य प्रधान के निर्वाचन में भाग लेंगे। मुझे तो यह नीति-विरुद्ध लगता है। अनुच्छेद 44 में यह बताया गया है कि सदस्य किस प्रकार मत देंगे। इस अनुच्छेद में अथवा विधान में कहीं और जगह भी ऐसी कोई व्यवस्था नहीं की गई है कि नामज़द सदस्य किस प्रकार से मत देंगे। केवल निर्वाचित सदस्यों के मतदान की ही व्यवस्था की गई है। अत: मैं समझता हूं कि मसौदा-सम्बन्धी कोई त्रुटि है। इसी कारण मैंने यह संशोधन पेश किया है कि अनुच्छेद 43 के खण्ड (क) में 'निर्वाचित' शब्द जोड़ दिया जाये जिससे कि दोनों केन्द्रीय विधान-मण्डल के निर्वाचित सदस्य तथा प्रान्तीय विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्य प्रधान का निर्वाचन करें, नामज़द सदस्यों का मत नहीं लिया जायेगा और न कोई ऐसी व्यवस्था है कि नामज़द सदस्य किस प्रकार मत देंगे। मेरा संशोधन बहुत साधारण है। मुझे अधिक नहीं कहना है। मुझे इसमें कोई सन्देह नहीं है कि सभा इसे स्वीकार करेगी और माननीय डॉक्टर अम्बेडकर भी इस संशोधन को स्वीकार करेंगे।

***उपाध्यक्ष:** मैं संशोधन संख्या 1063 पर, जो डॉक्टर अम्बेडकर तथा अन्य व्यक्तियों के नाम से है, मत नहीं ले रहा हूं क्योंकि वह संशोधन संख्या 1064 के समान है जिसको अभी पेश किया जा चुका है।

डॉ. अम्बेडकर, क्या आप इसे स्वीकार करते हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): जी हां।

***उपाध्यक्ष:** तो मैं उस पर मत नहीं लूंगा।

संशोधन संख्या 1064 पर एक संशोधन, जो श्री गोकुल भाई भट्ट के नाम से है, पेश नहीं किया गया है क्योंकि माननीय सदस्य सभा में उपस्थित नहीं हैं। संशोधन संख्या 1065 और 1066 को पेश करने की मैं आज्ञा नहीं देता हूं क्योंकि वे केवल शाब्दिक हैं।

***श्री एस. नागप्पा** (मद्रास : जनरल): मैं संशोधन संख्या 1069 को पेश नहीं करता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 43 में निम्न व्याख्या प्रविष्ट की जाये:

'*Explanation.*—In this and the next succeeding article, the expression "the Legislature of a State" means, where the Legislature is bi-cameral, the lower House of the Legislature.' "

(व्याख्या—इस अनुच्छेद में तथा इससे आगे के अनुच्छेद में "राज्य के विधान-मण्डल" पद का अर्थ, जहां कि विधान-मण्डल द्विआगारिक है, वहां विधान-मण्डल के अवर-आगार से है।)

यह वांछनीय है कि यह संशोधन किया जाये, क्योंकि किसी राज्य में दो विधान-मण्डल हो सकते हैं और यदि यह संशोधन नहीं किया जाता है, तो प्रधान के निर्वाचन में उत्तर-आगार के सदस्यों को भी भाग लेने का अधिकार होगा। हमारा यह उद्देश्य नहीं है। हम चाहते हैं कि केवल जनमत द्वारा निर्वाचित सदस्य ही प्रधान के निर्वाचन में भाग लेने के अधिकारी हों। इस आशय से यह संशोधन रखा जाता है।

***उपाध्यक्ष:** मि. मोहम्मद ताहिर इस संशोधन पर अपने संशोधन संख्या 23 को पेश कर सकते हैं।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 1070 द्वारा प्रस्तावित व्याख्या में 'the Lower House of the Legislature' (विधान-मण्डल के अवर-आगार) शब्दों के स्थान में 'the Legislative Assembly of the State' (राज्य की विधान-सभा) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, अपने मित्र डॉ. अम्बेडकर के प्रति उचित सम्मान प्रदर्शित करते हुये मैं इस संशोधन को पेश कर रहा हूं। मेरी सम्मति में 'विधान-मण्डल के

[श्री मोहम्मद ताहिर]

अवर-आगार' शब्दों की अपनी कोई सत्ता नहीं हैं। राज्य के "विधान-मण्डलों" की हमने केवल विधान के इस मसौदे में ही परिभाषा नहीं की है वरन् वह भारतीय सरकार के अधिनियम में भी पाई जाती है। उसमें राज्य के विधान-मण्डलों की व्याख्या या तो विधान-परिषद् के रूप में की गई है या विधानसभा के रूप में की गई है। हमने राज्य के आगारों की एक विशेष रूप में व्याख्या की है अर्थात् विधान के मसौदे के अनुच्छेद 148 में एक को विधान-परिषद् कहा गया है और दूसरी को विधानसभा। अत: मेरा विनम्र निवेदन यह है कि जहां कहीं हमें इन आगारों में से किसी आगार-सम्बन्धी पद का प्रयोग करना हो तो हमें अपने विधान में परिभाषित पदों का ही प्रयोग करना चाहिये अन्य पदों का नहीं।

श्रीमान्, अब हम यह विचार करेंगे कि 'अवर-आगार' पद किस प्रकार प्रचलित हुआ। मेरा विश्वास है कि यह इस आधार पर प्रचलित हुआ कि अब तक विधान-सभा के सदस्यों का चुनाव साधारण जनता द्वारा अर्थात् देश के उस सामान्य जनसमुदाय द्वारा किया जाता था जो 6 आने या 12 आने चौकीदारी तथा अन्य इसी प्रकार के कर देते थे और विधान-परिषद् के सदस्य इससे अधिक योग्य व्यक्तियों द्वारा चुने जाते थे। इस अन्तर से लोगों के मनों में स्वभावत: यह विचार उत्पन्न हो गया कि विधान-सभा अवर-आगार है और विधान-परिषद् उत्तर-आगार है। भारत में स्वतन्त्रता प्राप्त कर लेने के पश्चात् मैं निवेदन करता हूं कि हमारे मनों में यह अन्तर नहीं बना रहना चाहिये। अत: मेरे विचार से विचारन सभा को अवर-आगार कहना उचित नहीं प्रतीत होता। किसी रूप में भी यह सभा अवर-आगार नहीं कही जा सकती। सदस्यों की संख्या के रूप में सभा-परिषद् से बड़ी हैं। विधान-सभा को राज्यों की विधान-परिषदों से अधिकार भी अधिक हैं। अन्त में मैं यह निवेदन करता हूं कि मैं सर्वप्रथम बात को अपने तर्कों का आधार बनाता हूं कि जब हमने राज्य के आगारों की एक विशेष रूप में परिभाषा कर दी है तो यह उचित रूप से वांछनीय है कि हम उन्हीं पदों का अर्थात् विधान-परिषद् और विधान-सभा का प्रयोग करें अन्य पदों का नहीं।

***उपाध्यक्ष:** इस अनुच्छेद पर अब सामान्य वाद-विवाद हो सकता है।

***श्री के. हनुमन्थैया** (मैसूर): उपाध्यक्ष, हमने बड़े ध्यान से आदरपूर्वक प्रो. शाह के तर्कों को सुना। वे चाहते हैं कि प्रधान का निर्वाचन प्रौढ़ नागरिकों द्वारा हो। प्रारम्भ में ही एक पारिभाषिक कठिनाई है। यदि प्रधान प्रौढ़ नागरिकों द्वारा निर्वाचित किया जाता है तो प्रत्येक नागरिक को मत देने का अधिकार हो जाता है। निर्वाचक-प्रणाली के अन्तर्गत मतदाताओं की सूची कुछ नियमों के अनुसार बनाई जाती है और कुछ लोग जो पागल हैं, जो दोष-प्रमाणित हैं और जिन लोगों ने अपनी सनदें खो दी हैं उनको मत देने का अधिकार नहीं है। पर इस 'प्रौढ़ नागरिक' पद में उन नागरिकों का भी समावेश हो जाता है जिनको सामान्य निर्वाचन में मत देने का अधिकार नहीं है। इसका अर्थ यह हुआ कि यदि प्रो. शाह के संशोधन में दिये गये शब्दों को स्वीकार कर लिया जाता है तो प्रधान के निर्वाचन में वे लोग भी मत दे सकेंगे जो सामान्य निर्वाचनों में मत देने के लिये निर्योग्य कर दिये गये हैं।

दूसरी बात यह है कि सभा के समक्ष जो यह विधान है उसमें शासन-व्यवस्था की परिषदात्मक प्रणाली को स्वीकार कर लिया है। परिषदात्मक प्रणाली में उत्तरदायी शासन की कल्पना पहले से ही विद्यमान है। शासन का संचालन प्रत्यक्ष रूप में लोक द्वारा नहीं किया जाता है परन्तु उचित रूप से निर्वाचित लोक-सदस्यों द्वारा किया जाता है, और इस सिद्धान्त के अनुरूप विधान-निर्माताओं ने प्रधान के निर्वाचन को प्रत्यक्ष निर्वाचन न बनाकर, जैसा कि प्रोफेसर के. टी. शाह कहते हैं, बल्कि उसे अप्रत्यक्ष निर्वाचन बना कर बुद्धिमानी की है।

तीसरी बात यह है कि प्रो. शाह चाहते हैं कि प्रधान किसी पार्टी में न हो। जिस कार्य-प्रणाली को प्रो. शाह ने रखा है यदि उसे मान लिया जाये तो वह अवश्य ही किसी दल का अभ्यर्थी हो जायेगा। प्रधान पद के लिये अभ्यर्थी को जब कि देश के इस सिरे से उस सिरे तक निर्वाचन-प्रचार के लिये जाना होगा तो वह किसी न किसी दल द्वारा मनोनीत किया जायेगा और निर्वाचन-प्रचार से स्वभावत: दलों में परस्पर वैमनस्य उत्पन्न होगा और इस प्रकार प्रधान पद के

[श्री के. हनुमन्थैया]

लिये जिस व्यक्ति का निर्वाचन होगा वह अपने दल को कभी न भूल सकेगा और उस प्रयोजन की पूर्ति नहीं करेगा जो कि प्रो. शाह की दृष्टि में है। इसके विपरीत यदि प्रधान विधान-मण्डलों तथा संसद् के सदस्यों द्वारा चुना जाता है तो यह सम्भव है कि वह किसी दल का आदमी न बने जिस प्रकार से कि सभा अथवा संसद् का अध्यक्ष किसी दल का आदमी नहीं होता है। अत: इस प्रयोजन की पूर्ति, कि प्रधान किसी दल का व्यक्ति न हो जो प्रोफेसर शाह के मन में है अच्छे प्रकार से तभी हो सकती है, जब कि विधान-मण्डल द्वारा उसका निर्वाचन हो न कि तब जब कि लोक-द्वारा उसका प्रत्यक्ष निर्वाचन हो।

तत्पश्चात्, श्रीमान्, प्रो. शाह चाहते हैं कि प्रधान वास्तविक रूप में सम्पूर्ण सत्ताधारी हो। विधान-निर्माताओं का यह उद्देश्य नहीं है। इस विधान में प्रधान को राज्याधिकार दिये गये हैं न कि शासनाधिकार। यहां प्रधान न्यूनाधिक रूप में इंग्लैण्ड के राजा के समान है। यदि हम प्रधान को वास्तविक अधिकार दे दें और उसको वास्तविक अधिशासी-अध्यक्ष बना दें तो मसौदा-समिति द्वारा जो ढांचा खड़ा किया गया है उसका पूरा रूप ही बदल जायेगा। यह संशोधन इस विधान के मसौदे में ठीक नहीं बैठता है अत: इसको अस्वीकार कर दिया जाये।

***श्री विश्वनाथ दास** (उड़ीसा : जनरल): श्रीमान्, मेरे माननीय मित्र प्रो. के. टी. शाह ने एक बड़ा महत्त्वपूर्ण वादहेतु प्रस्तुत किया है अर्थात् संयुक्त राज्य अमरीका की वर्तमान प्रचलित प्रणाली को यहां पर जारी करना। श्रीमान्, आजकल देशों में प्रजातन्त्र की दो विभिन्न प्रणालियां काम में लाई जा रही हैं। एक प्रणाली इस समय संयुक्त राष्ट्र अमरीका में प्रचलित है और दूसरी उत्तरदायी मंत्रिमंडल की शासन प्रणाली है। हमने एक संघ-समिति नियुक्त की थी। उचित विचार-विमर्श के पश्चात् ऊंच-नीच सोचकर, विभिन्न देशों में विधानों के अनुसार काम करने से जिन कठिनाइयों, लाभों का पता चला है, उनको ध्यान में रख कर इस समिति ने एक उत्तरदायित्वपूर्ण प्रणाली की योजना बनाई है जो उत्तरदायित्वपूर्ण मंत्रिमंडल प्रणाली के नाम से विख्यात हैं। श्रीमान्, कमेटी की उस रिपोर्ट को इस

सभा के माननीय सदस्यों ने स्वीकार कर लिया था। यह प्रो. शाह की इच्छा पर निर्भर था कि वे उस समय अपना प्रस्ताव पेश करते और इस विषय पर कुछ निर्णय कराते। इस सभा के माननीय सदस्यों ने जो निर्णय किये थे उन्हीं को ठीक रूप में कर देने भर का काम मसौदा समिति ने किया है। अब इस बात के लिए समय नहीं रहा है कि हम अपने विधान के स्वरूप में कोई मौलिक परिवर्तन करें। यदि हम इसके आधारभूत सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन इस समय करेंगे तो विधान के अनेकों अनुच्छेदों में परिवर्तन करना आवश्यक हो जायेगा। परिणाम यह होगा कि संविधान का सारा आधार ही परिवर्तित हो जायेगा। अत: अपने माननीय मित्र से मेरा निवेदन है कि वे अपने संशोधन पर ज़ोर न दें। श्रीमान्, अपने तर्क की पुष्टि में उन्होंने हमसे इस बात का आग्रह किया है कि हम यह आदर्श रखें कि प्रधान का पद ऐसा हो कि वह किसी दल का सदस्य न रहे। मैं उनसे यही बात कहना चाहता हूं कि उन्होंने एक असम्भव कार्य को हाथ में लिया है। श्रीमान्, दलबन्दी तो प्रजातंत्र का प्राण है। अत: आप इस संसार में कोई ऐसा प्रधान किस प्रकार बना सकेंगे जो किसी दल से सम्बन्धित न हो? संयुक्त राष्ट्र अमरीका का प्रधान भी किसी दल का व्यक्ति होता है। जिन्होंने अमरीका के विधान के काम करने के ढंग पर दृष्टि डाली है और विशेषकर गत प्रधान के निर्वाचन पर विशेष ध्यान दिया है वे इस निर्णय पर अवश्य पहुंचे होंगे कि अमरीका में दलबन्दी ही का बोलबाला है। यदि प्रो. शाह यह विचार रखते हैं कि प्रधान किसी दल का व्यक्ति न हो तब तो उनको प्रजातन्त्र के अतिरिक्त किसी अन्य प्रणाली की बात सोचनी होगी। श्रीमान्, तुर्की में एक प्रकार की दल-प्रभाव-शून्य सरकार है परन्तु दलबन्दी पर आश्रित सरकार को श्रेय देकर उसने अब उस प्रणाली का परित्याग कर दिया है और निर्वाचनों की प्रथा अपने यहां चला दी है। यदि आप किसी दल से असम्बन्धित प्रधान के बारे में सोचते हैं तब तो आपको एक तानाशाही राज्य की कल्पना करनी होगी। ऐसा हो नहीं सकता। अत: उनके इस तर्क का, कि प्रधान किसी दल का व्यक्ति नहीं होना चाहिये और न है, मुझ पर किंचित्-मात्र भी प्रभाव नहीं होता।

श्रीमान्, यह पूरा प्रश्न एक ही बात पर निर्भर है और वह बात यह है कि प्रशासन-कार्य में जनता के प्रति उत्तरदायी कौन हो। जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन

[श्री विश्वनाथ दास]

में प्रधान के चुने जाने से संसद् के क्षेत्र से बाहर प्रधान की स्वतन्त्र सत्ता हो जाती है। ऐसा कभी-कभी हो जाता है और माननीय सदस्यों ने देखा भी होगा कि संसद् और प्रधान में विरोध पैदा हो जाता है और राजतन्त्र का शान्तिपूर्वक कार्य करना कठिन हो जाता है। इन अन्तरों से यह भी हो सकता है कि महत्त्वपूर्ण योजनायें भी इस कारण उलट-पुलट हो जाती हैं। संसदात्मक प्रणाली में भी अपनी कुछ कठिनाइयां हैं। अनेकों देशों में संसदात्मक प्रणाली प्रचलित है। फ्रांस में मंत्रिमण्डल प्रणाली की शासन-व्यवस्था में कुछ कठिनाई अनुभव की गई इसके फलस्वरूप उनके विधान में कुछ परिवर्तन हुये और अब वे आशा करते हैं कि अब से उपरान्त फ्रांस में अधिशासी-मण्डल पहले की अपेक्षा अधिक स्थायी होगा। अत: मेरे माननीय मित्र प्रो. शाह का यह कर्त्तव्य है कि वे उन तरीकों की खोज करें जिनके द्वारा संसदात्मक प्रणाली की शासन-व्यवस्था, मंत्रिमंडल प्रणाली की शासन व्यवस्था उचित रूप में भली प्रकार स्थायी होकर कार्य कर सके। मेरा उनसे यह विनम्र निवेदन है कि अब विधान के बुनियादी ढांचे में किसी प्रकार का परिवर्तन करना सम्भव नहीं है। हम बहुत दिनों से विधान बना रहे हैं और देश उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। मैं उनसे तथा इस सभा के अन्य माननीय सदस्यों से निवेदन करूंगा कि वे इस बात का ध्यान रखें कि हम इस विधान पर वाद-विवाद शीघ्र समाप्त करें और उसे जितना शीघ्र हो सके उतना शीघ्र स्वीकार करें। संघ-समिति ने इस विषय पर उचित ध्यान दिया है। अत: मेरा निवेदन है कि इस अनुच्छेद को स्वीकार किया जाय और संशोधन को अस्वीकार किया जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर :** श्री उपाध्यक्ष, श्रीमान्, जो संशोधन पेश किये गये हैं उनमें से मैं केवल संशोधन संख्या 1064 को स्वीकार करता हूं। मुझे खेद है कि मैं अन्य संशोधनों को स्वीकार नहीं कर सकता हूं।

श्रीमान्, इस अनुच्छेद पर सामान्य वाद-विवाद की ओर ध्यान देने पर सबसे महत्त्वपूर्ण संशोधन प्रो. शाह का है जिसमें यह विचार प्रस्तुत किया गया है कि प्रधान का निर्वाचन वयस्क-मताधिकार द्वारा हो। मेरे मत से इस विषय पर तीन

दृष्टिकोणों से विचार करने की आवश्यकता है। सर्वप्रथम इस पर निर्वाचक-समूह के परिमाण के दृष्टिकोण से विचार करना चाहिये। यदि हम प्रो. शाह के सुझाव को मान लें तो प्रधान के निर्वाचन में जितने मतदाता भाग लेंगे उनकी संख्या का अनुमान मैं सभा के समक्ष रख दूं तो ठीक होगा।

अब तक जो अंक प्राप्त हुये हैं उनके अनुसार गवर्नर के प्रान्तों की कुल जनसंख्या 22,81,63,637 है। देशी राज्यों की जनसंख्या 8,88,08,434 है। दोनों को मिला कर भारत राज्य-क्षेत्र की जनसंख्या 3170 लाख हुई। मान लीजिये कि वयस्क-मताधिकार के आधार पर जो जनसंख्या प्रधान के निर्वाचन में भाग लेगी वह कुल जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत होगी तो निर्वाचक-समूह 158.5 लाख का होगा। अमरीका के प्रधान के निर्वाचन में जितने लोग मत देते हैं उनकी संख्या भी मैं आपके सामने रख देता हूं जैसा कि मैं समझता हूं अमरीका का समस्त निर्वाचक-समूह 750 लाख का है—सम्भव है इसमें कुछ त्रुटि हो, उसको ठीक किया जा सकता है। मैं समझता हूं कि यदि माननीय सदस्य उस संख्या को याद रखेंगे जो मैंने अभी बताई है अर्थात् 158.5 लाख, तो वे एक ऐसे निर्वाचन की असम्भावना को समझ जायेंगे जिसमें 158.5 लाख लोग भाग लेंगे। अत: मेरे विचार से निर्वाचक-समूह का परिमाण हमें बाध्य करता है कि प्रधान के निर्वाचन के विषय में हम प्रौढ़-मताधिकार को ग्रहण न करें।

प्रौढ़-मताधिकार के इस प्रश्न पर दूसरी बात, जिसे ध्यान में रखना है, वह प्रशासन-तन्त्र है। क्या इस देश के लिये यह सम्भव है कि वह इतने कार्यकर्त्ता दे सके जिनकी आवश्यकता विभिन्न निर्वाचक स्थानों पर होगी जहां 158.5 लाख लोग आकर मत देंगे? मुझे यह विश्वास है कि निर्वाचन के लिये बहुत से उम्मीदवार खड़े नहीं होंगे और वे ग़ैर सरकारी लोगों को चुनाव में काम नहीं करने देना चाहेंगे क्योंकि गैर-सरकारी लोग राज्य के आयन्त्रण में नहीं होंगे और वे भ्रष्टाचार, उत्कोच, चालाकियों तथा अन्य अवांछनीय बातों से प्रभावित हो सकते हैं। अत: इसके प्रबन्ध के लिये सरकारी शासन व्यवस्था से आदमी लेने पड़ेंगे। क्या भारतीय सरकार अथवा देशी राज्यों की सरकार इतने कार्यकर्त्ताओं को देने में समर्थ हो सकेगी, जो भाग लेने वाले 158.5 लाख मतदाताओं का निर्वाचन में प्रबन्ध कर सकें? यह भी मुझे सर्वथा असम्भव-सा प्रतीत होता है। इन दो विचारों के अतिरिक्त एक महत्त्वपूर्ण विचार जो वयस्क-मताधिकार के विरोध में निर्णय

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

करने के लिये मसौदा-समिति तथा संघ-समिति को गंभीर जंचा, वह प्रधान की विधान में स्थिति थी। यदि प्रधान की वही स्थिति होती जो कि संयुक्त राज्य अमरीका के प्रधान की है, जिसे संयुक्त राज्य के समस्त अधिशासी कार्यभार सौंपे जाते हैं, तब तो मैं प्रत्यक्ष निर्वाचन के तर्क को इस सिद्धान्त के आधार पर समझ सकता था कि जहां किसी व्यक्ति पर अधिकारों का उतना ही गुरुतर भार सौंपा जाता है जितना कि संयुक्त राज्य के प्रधान पर है, तो यह स्वाभाविक ही है कि उस व्यक्ति का निर्वाचन प्रत्यक्ष लोकमत द्वारा हो। पर भारतीय संघ के प्रधान की क्या स्थिति है? यदि प्रो. शाह विधान के अन्य प्रावधानों का परीक्षण करें तो उन्हें पता चलेगा कि वह केवल एक नाममात्र का मुखिया है। उसकी स्थिति संयुक्त राष्ट्र के प्रधान जैसी नहीं है। हमारे भारतीय विधान के अन्तर्गत संयुक्त राष्ट्र के प्रधान की तुलना यदि किसी उच्च प्राधिकारी से की जा सकती है तो वह प्रधान-मंत्री से की जा सकती है न कि संघ के प्रधान से। जहां तक प्रधान-मंत्री के निर्वाचन का सम्बन्ध है, विधान में निश्चित रूप से दिया गया है कि उसका निर्वाचन जनता द्वारा वयस्क-मताधिकार के आधार पर होगा। अतः इस बात का ध्यान रखते हुये, जिसका कि मैंने उल्लेख किया है कि वास्तव में प्रधान को कोई अधिशासी अधिकार नहीं है, इस बात के पक्ष में कि प्रधान का निर्वाचन वयस्क-मताधिकार के आधार पर हो, जो कुछ भी अन्तिम तर्क उपस्थित किया जा सकता है, वह मेरी सम्मति से सारहीन सिद्ध हो जाता है। अतः मैं निवेदन करता हूं कि निर्वाचक-समूह के परिमाण पर विचार करते हुये, उस व्यवस्था-सम्बन्धी कमी पर विचार करते हुये जिसकी आवश्यकता इतने बड़े निर्वाचन के लिये होगी और इस बात पर विचार करते हुये कि प्रधान को अधिशासन सम्बन्धी ऐसा कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं है जो कि संयुक्त राष्ट्र के प्रधान को है, वयस्क-मताधिकार के विषय को लेना तथा उसके आधार पर प्रधान के निर्वाचन की व्यवस्था करना अनावश्यक है।

मेरे विचार से विधान के मसौदे में हमने जो सुझाव रखे हैं, इस विषय की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये यथेष्ट हैं। हमने यह व्यवस्था की है कि प्रधान का निर्वाचन राज्य के विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्यों द्वारा होगा जिनका स्वयं वयस्क-मताधिकार द्वारा निर्वाचन किया जाता है। संसद् के दोनों आगारों द्वारा भी उसका निर्वाचन होगा। संसद के अवर-आगार का भी प्रत्यक्ष निर्वाचन वयस्क-मताधिकार के आधार पर जनता द्वारा किया जाता है उत्तर-आगार का

निर्वाचन राज्य के विधान-मण्डलों के अवर-आगारों द्वारा किया जाता है जिनका निर्वाचन भी वयस्क मताधिकार द्वारा होता है। अत: इन प्रावधानों पर विचार करते हुये मैं समझता हूं कि प्रो. शाह के संशोधन के लिये स्थान नहीं है अत: मैं संशोधन का विरोध करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं एक-एक करके संशाधनों पर मत लूंगा। संशोधन संख्या 1051, जो श्री दामोदरस्वरूप सेठ के नाम से है।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 43 और 44 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'The President shall be elected by means of the single transferable vote by an electoral college composed of the members of Parliament and an equal number of persons elected by the legislatures of the States on population basis under the system of single transferable vote.' "

(प्रधान का निर्वाचन एकल संक्राम्य मत के आधार पर एक निर्वाचन-निकाय द्वारा होगा जिसमें संसद् के सदस्य और उनके बराबर संख्या में एकल संक्राम्य मत-पद्धति के अनुसार जनसंख्या के आधार पर राज्यों के विधान-मण्डलों द्वारा चुने गये सदस्य होंगे।)

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1053, जो प्रो. के. टी. शाह के नाम से है।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 43 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

'43. The President shall be elected by the adult citizen of India, voting by secret ballot, in each constituent part of the Union.'

(43. संघ के प्रत्येक अंगभूत भाग में भारत के प्रौढ़ नागरिकों द्वारा गूढ़-शलाका मतप्रणाली के अनुसार प्रधान का निर्वाचन होगा।)"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1057, जो मि. करीमुद्दीन के नाम से है।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 43 के स्थान में निम्न अनुच्छेद रखा जाये:

[उपाध्यक्ष]

'43. The President shall be elected on the basis of adult sufferage.'

(प्रधान का निर्वाचन प्रौढ़ मताधिकार के आधार पर होगा।)

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1068, जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम से है। प्रस्ताव यह है:

"कि 43 अनुच्छेद के खण्ड (ख) में से 'elected' (निर्वाचित) शब्द निकाल दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1064, जो मि. तजम्मुल हुसैन के नाम से है। प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 43 के खण्ड (क) 'the members' (सदस्य) शब्द के स्थान में 'the elected members' (निर्वाचित सदस्य) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1070, जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है। प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 43 में निम्न व्याख्या प्रविष्ट की जाये:

'*Explanation*.—In this and the next succeeding article, the expression "the Legislature of a State" means where the Legislature is bi-cameral, the Lower House of the Legislature.' "

(*व्याख्या*–इस अनुच्छेद में तथा इससे आगे के अनुच्छेद में "राज्य के विधान-मण्डल" पद का अर्थ, जहां कि विधान-मण्डल द्वि-आगारिक है वहां विधान-मण्डल के अवर-आगार से है।)

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) का संशोधन 23 जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम से है।

प्रस्ताव यह है:

" कि संशोधनों की सूची में संशोधन संख्या 1070 द्वारा प्रस्तावित व्याख्या में 'the Lower House of the Legislature' (विधान-मण्डल के अवर-आगार) शब्दों के स्थान में 'the Legislative Assembly of the State' (राज्य की विधान-सभा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं अनुच्छेद पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 43 विधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 43 विधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 15

***उपाध्यक्ष:** सभा की अनुमति से मैं एक स्थगित अनुच्छेद अर्थात् अनुच्छेद 15 को लेना चाहता हूं। इस अनुच्छेद पर गत 6 दिसम्बर को विचार किया गया था और सभा की कार्यवाहियों की प्रतियों से, जो मेरे समक्ष हैं, यह विदित होता है कि सामान्य वाद-विवाद समाप्त हो चुका था और मैंने डॉ. अम्बेडकर को उत्तर देने के लिये आमन्त्रित किया था। उस समय यह विचार रखा गया था कि किसी समझौते पर पहुंचने का प्रयत्न किया जाये जिससे कि जिन लोगों ने कुछ संशोधन पेश किये हैं उनको सन्तोष हो। वर्तमान परिस्थिति से मैं परिचित नहीं हूं परन्तु अब हम और अधिक नहीं ठहर सकते। डॉ. अम्बेडकर, क्या आप इस स्थिति को स्पष्ट करेंगे? यदि कोई समझौता नहीं हुआ है तो मैं आपसे उत्तर देने के लिये निवेदन करूंगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष, मुझे यह स्वीकार करना चाहिये कि अनुच्छेद 15 के सम्बन्ध में और मेरे मित्र भार्गव द्वारा "विधि-अनुसार-प्रणाली" के स्थान में "उचित रीति" शब्द रखने वाले संशोधन के सम्बन्ध में मैं कुछ कठिन स्थिति में हूं।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

जिस व्यक्ति ने पिछले वाद-विवाद को सुना है उसके लिये यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि इस विषय पर प्रत्यक्षत: दो दृष्टिकोण हैं। एक दृष्टिकोण यह है कि इस अनुच्छेद में "विधि की उचित रीति" पदावली होनी चाहिए, अन्यथा अनुच्छेद निषेधात्मक हो जायेगा। दूसरा दृष्टिकोण यह है कि वर्तमान पदावली इस प्रयोजन हेतु पर्याप्त है। मैं इस बात को स्पष्ट किये देता हूं कि "उचित रीति" पदावली का ठीक अर्थ क्या है।

'समुचित रीति' पद को रखने के प्रश्न का सम्बन्ध इस प्रश्न से है कि विधान-मण्डल और न्यायाधीश में पारस्परिक सम्बन्ध क्या हो। संघीय संविधान में न्यायाधीश-वर्ग को इस बात का निर्णय करने का सदैव अधिकार होता है कि विधान-मंडल द्वारा पारित कोई विशेष कानून उसके उन अधिकारों के अन्तर्गत है अथवा परे जो संविधान द्वारा किसी विशेष विधान-मंडल को कानून बनाने के लिये दिए गये हैं यदि किसी विशेष विधान-मण्डल द्वारा निर्मित कानून उन शक्ति प्राधिकारों का उल्लंघन करता है जो संविधान द्वारा किसी विशेष विधान-मंडल को कानून बनाने के लिए दिये गए हैं तो वह कानून अधिकारों से परे हो जायेगा और अमान्य हो जायेगा। यह एक सामान्य बात है जो सब संघीय विधानों में पाई जाती है। संघीय विधान का प्रत्येक कानून चाहे वह केन्द्रीय संसद् द्वारा बनाया गया हो अथवा राज्य विधान-मण्डल द्वारा, कानून बनाने वाले विधान-मंडल के प्राधिकारों के दृष्टिकोण से सदैव न्यायाधीश-वर्ग के परीक्षण के आधीन है। मेरे मत से "उचित रीति" वाला खंड न्यायाधीश-वर्ग को विधान-मण्डल द्वारा निर्मित कानून में एक अन्य आधार पर आपत्ति उठाने का अधिकार प्रदान करता है। वह आधार यह होगा कि वह कानून व्यक्ति के अधिकारों से सम्बन्धित कतिपय मूल सिद्धान्तों के अनुकूल नहीं है। दूसरे शब्दों में केवल इसी आधार पर ही कि वह कानून विधान-मण्डल के प्राधिकार का उल्लंघन करता है, न्यायाधीश-वर्ग को उस पर आपत्ति करने का अधिकार न होगा वरन् कानून बनाने वाले विधान-मण्डल के अधिकारों से सम्बद्ध आपत्ति के अतिरिक्त इस आधार पर भी आपत्ति करने का अधिकार होगा कि कानून अच्छा है या नहीं। जहां तक उसका विधान-मंडल के प्राधिकार से सम्बन्ध है, वह कानून पूर्णतया कल्याणकर तथा मान्य भले ही हो, पर यह हो सकता है कि वह अच्छा कानून न हो अर्थात् वह कुछ मूल सिद्धान्तों का उल्लंघन करता हो। ऐसी अवस्था में न्यायाधीश-वर्ग को उस कानून के अमान्य घोषित करने का अतिरिक्त

अधिकार होगा। अत: इस सम्बन्ध में हमारे विचार के लिए जो प्रश्न पैदा होता है वह यह है। हमने पहले ही निश्चयरूपेण यह अधिकार न्यायाधीश-वर्ग को दे दिया है कि वह इस बात की परीक्षा करे कि विभिन्न विधान-मण्डलों द्वारा निर्मित विधान उनको दी गई शक्तियों के अनुकूल है या नहीं। "उचित रीति" पद के रखने से यह प्रश्न और उठेगा कि आया न्यायाधीश-वर्ग को यह और भी अधिकार दिया जाये कि वह इस आधार पर भी आपत्ति कर सके कि राज्य द्वारा निर्मित कानून कतिपय मूल सिद्धान्तों का उल्लंघन करता है।

इस विषय पर दो मत हैं। एक मत यह है कि विधान-मण्डल पर यह विश्वास किया जाये कि वह ऐसा कोई कानून नहीं बनायेगा जो उन मूलाधिकारों का उल्लंघन करता हो और जो प्रत्येक व्यक्ति पर लागू होता हो। अत: 'उचित रीति' पद के रखने से कोई संकट उत्पन्न नहीं हो सकता। दूसरा मत यह है कि विधान-मंडल पर विश्वास नहीं किया जा सकता। विधान-मण्डल गलती कर सकता है; उस पर उत्तेजना, दलबन्दी और दल के विचारों का प्रभाव पड़ सकता है और विधान-मण्डल ऐसा कानून बना सकता है जो उन मूल सिद्धान्तों का खंडन करता हो, जो किसी नागरिक के व्यक्तिगत अधिकारों के कवच सम होते हैं। अत: हम दो कठिन स्थितियों के बीच में आ गये हैं। एक यह है कि विधान-मंडल के निर्णय पर विचार करने का अधिकार न्यायाधीश-वर्ग को हो और वह इस आधार पर विधान-मंडल द्वारा निर्मित कानून पर आपत्ति कर सके कि मूल सिद्धान्तों के अनुकूल न होने से यह कल्याणकारी कानून नहीं है।

क्या यह वांछनीय सिद्धान्त है? दूसरी स्थिति यह है कि विधान-मंडल पर यह विश्वास किया जाये कि वह खराब कानून नहीं बनायेगा। किसी भी निश्चित परिणाम पर पहुंचना बहुत कठिन है। दोनों ओर संकट है। मैं स्वयं दलबन्दी से परिपूर्ण विधान-मंडल द्वारा इस प्रकार के कानून बनाने की सम्भावना को पूर्णतया अस्वीकार नहीं कर सकता हूं जो उन सिद्धान्तों का खण्डन तथा उल्लंघन करे, जिनको हम उन कतिपय मूल सिद्धान्तों के रूप में समझते हैं, जो व्यक्ति के जीवन और उसकी स्वतन्त्रता पर प्रभाव डालने वाले हैं। इसके साथ ही साथ मैं यह भी नहीं समझ पाता हूं कि किस प्रकार पांच या छ: सज्जनगणों पर यह विश्वास किया जाये कि वे संघीय अथवा सर्वोच्च न्यायालय में बैठ कर विधान-मंडल द्वारा निर्मित कानूनों की परीक्षा पर अपने-अपने अन्त:करण से

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अथवा ईर्ष्या से अथवा पक्षपात से यह निर्णय करें कि कौन कानून भला है और कौन बुरा। कदाचित यह एक ऐसी स्थिति है कि इधर गिरो तो खाई और उधर गिरो तो कुआं; अत: मैं कुछ भी नहीं कहूंगा। इसे मैं सभा पर छोड़ता हूं और वह जैसा चाहे वैसा निर्णय करे।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधनों पर एक-एक करके मत लूंगा। संशोधन संख्या 523 ।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 15 में 'No person shall be deprived of his life or personal liberty except according to procedure established by law' (किसी व्यक्ति को अपने प्राण अथवा दैहिक स्वातंत्र्य से विधि द्वारा नियत कार्य-प्रणाली को छोड़ कर अन्य प्रकार वंचित न किया जायेगा) शब्दों के स्थान में 'No person shall be deprived of his life or liberty without due process of law' (विधि की उचित रीति के बिना किसी व्यक्ति को अपने प्राण अथवा स्वतन्त्रता से वंचित न किया जायेगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 15 में 'except according to procedure established by law' (विधि द्वारा नियत कार्य-प्रणाली को छोड़ कर अन्य प्रकार) शब्दों के स्थान में 'due process of law' (विधि की उचित रीति) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 528 ।

***श्री एस.वी. कृष्णामूर्ति राव** (मैसूर): मैं उस पर आग्रह नहीं करता हूं।

(परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 530 ।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 15 में 'procedure established by law'(विधि द्वारा नियत कार्यप्रणाली) शब्दों के स्थान में 'due process of law' (विधि की उचित रीति) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 526 ।

"कि अनुच्छेद 15 में 'except according to procedure established by law' (विधि द्वारा नियत कार्यप्रणाली को छोड़कर अन्य प्रकार) शब्दों के स्थान में 'save in accordance with law' (सिवाय विधि अनुसार) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 527 ।

"कि अनुच्छेद 15 में 'except according to procedure established by law' (विधि द्वारा नियत कार्यप्रणाली को छोड़ कर) शब्दों के स्थान में 'excpet in accordance with law' (विधि-अनुकूल प्रणाली को छोड़ कर) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** मैं अनुच्छेद पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 15 विधान का अंग बने।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

अनुच्छेद 15 विधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 44

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 44 को लेंगे।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 44 विधान का अंग बने।"

[उपाध्यक्ष]

मैं एक-एक करके संशोधनों को उठाऊंगा।

संशोधन संख्या 1071 निषेधात्मक रूप का है, इस कारण उसे पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

(संशोधन संख्या 1072 और 1073 पेश नहीं किये गये।)

शाब्दिक होने के कारण संशोधन संख्या 1074 को पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

संशोधन संख्या 1075—डॉ. अम्बेडकर!

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ग) में 'such members' (इन सदस्यों) शब्दों के स्थान में 'the elected members of both Houses of Parliament' (संसद् के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

इस संशोधन के पक्ष में तर्क उपस्थित करने के पूर्व मैं आपकी अनुमति से इस अनुच्छेद के खण्ड (2) को एक मिनट के लिये फिर से लेना और इस खण्ड के उपखण्ड (क) और (ख) में जो योजना नियत की गई है उसकी व्याख्या करना चाहता हूं। माननीय सदस्यों ने यह देखा होगा कि प्रधान प्रत्येक राज्य-विधान-मण्डल के निर्वाचित सदस्यों तथा संसद् के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यों द्वारा निर्वाचित किया जायेगा। प्रधान के निर्वाचन के लिये ये दोनों मिलकर एक निर्वाचक-निकाय बनायेंगे। अनुच्छेद 44 के उपखण्ड (1) में कहा गया है कि जहां तक व्यवहार्य हो, प्रधान के निर्वाचन में विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधान की मापश्रेणी में एकरूपता होगी। निर्वाचक-निकाय के प्रत्येक सदस्य को एक मतदान का अधिकार सौंप कर यह एकरूपता सरल विधि से की जा सकती थी। परन्तु विधान-मण्डल के सदस्यों और उनके तथा जनसंख्या के अनुपात में असमानता होने के कारण, जो कि विभिन्न राज्यों में वर्तमान है, ऐसा नहीं हो सकता। प्रथम अनुसूची के भाग 1 में उल्लिखित राज्यों के सम्बन्ध में अनुच्छेद 149 (3) एक लाख जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि की मापश्रेणी नियत

करता है। भाग 3 में उल्लिखित राज्यों के लिये ऐसी कोई मापश्रेणी निर्धारित नहीं की गई है। एक राज्य में प्रत्येक 10,000 की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि हो सकता है। दूसरे राज्य में प्रत्येक 20,000 की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि हो सकता है। इस स्थिति में राज्य-विधान-मण्डलों के सदस्यों द्वारा प्रधान के निर्वाचन में दिये हुए मतों का मूल्य एक व्यक्ति को एक मत का अधिकार देने वाले साधारण नियम द्वारा नहीं मापा जा सकता है। अत: समस्या यह है कि उन सदस्यों द्वारा दिये हुये मतों के मूल्य में एकरूपता किस प्रकार लाई जाये जो समान निर्वाचक इकाई का प्रतिनिधान नहीं करते हैं। राज्य-विधान-मण्डलों के निर्वाचित सदस्यों द्वारा दिये गये मत का मूल्यांकन करने के लिये जो रीति स्वीकार की गई है वह यह है कि राज्य की जनसंख्या में उस राज्य के विधान-मण्डल के निर्वाचित सदस्यों की समस्त संख्या का भाग दिया जाये और जो भागफल आये उसमें 1000 का भाग दिया जाये और यदि शेष 500 से कम नहीं है तो भागफल में 1 बढ़ा दिया जाये। खण्ड (2) के (ख) और (ग) उपखण्डों में यही दिया गया है।

अब मैं उप-खण्ड (ग) पर आता हूं जिसको मैंने पेश किया है। संसद् के सदस्यों द्वारा दिये गये मत के सम्बन्ध में भी हमारे सामने वही समस्या आ जाती है अर्थात् निर्वाचक इकाइयों में असमानता और इसके फलस्वरूप उन सदस्यों द्वारा दिये गये मत की मान में असमानता। यह असमानता उन्हीं कारणों द्वारा उत्पन्न होती है। सर्वप्रथम राज्य-परिषद् में जिसका निर्वाचन राज्य-विधान-मण्डल द्वारा होता है वही असमानता है जो भाग 1 के राज्यों और भाग 3 के राज्यों में वर्तमान है। दूसरी बात यह है कि संसद् के सदस्यों के निर्वाचन में भी स्थानों और जनसंख्या के अनुपात में वही असमानता है जो भाग 1 और 3 के राज्यों में है

संसद् के सदस्यों दिये गये मत में एकरूपता लाने की दो रीतियां हैं। एक यह है कि समस्त राज्य-विधान-मण्डलों के सदस्यों द्वारा जितने भी मत दिये जा सकते हैं उनकी समस्त संख्या में सब राज्य-विधान-मण्डलों के सदस्यों की संख्या का भाग दिया जाये और जितना भागफल आये उतने मत देने का अधिकार प्रत्येक सदस्य को हो। दूसरी यह है कि समस्त राज्य के विधान-मण्डलों के

[माननीय डा. बी.आर. अम्बेडकर]

सदस्यों द्वारा जितने भी मत दिये जा सकते हैं उनकी समस्त संख्या में संसद् के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यों की समस्त संख्या का भाग दिया जाये। पहली रीति उपखण्ड (ग) में, जिस रूप में कि वह अब है, निर्धारित की गई है। दूसरी रीति उपखण्ड (ग) पर जो मैंने संशोधन पेश किया है उसमें निहित है। दोनों रीतियों में अन्तर यह है। पहली रीति में प्रधान के निर्वाचन में भाग लेने वाले निर्वाचक निकाय के समस्त सदस्यों के मतों का मूल्यांकन समान रूप में किया गया है। दूसरी रीति में मतदान के विषय में संसद् के सदस्यों को उतनी ही समशक्ति दी गई है जितनी कि राज्य-विधान-मण्डल के सदस्यों को होगी। यह अनुभव किया गया। है कि वर्तमान रूप में उपखण्ड (ग) संसद् के सदस्यों को जितनी शक्ति प्रदान करता है उससे अधिक उनको होनी चाहिये।

***उपाध्यक्ष:** शाब्दिक होने के कारण संशोधन सं. 1076 को पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है।

संशोधन संख्या 1077—श्री महावीर त्यागी!

***श्री महावीर त्यागी** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, 1077 के बजाय मुझे 1078 पेश करने की अनुमति दी जाये।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1077 पर मत नहीं लिया जायेगा। मैं संशोधन संख्या 1078 को पेश करने की आज्ञा देता हूं।

* **श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (3) के स्थान में निम्न खण्ड रखा जाये:

'(3) The election of the President shall be held by secret ballot and in accordance with the system of majority preferential voting by the single alternative vote.' "

[(3) प्रधान का निर्वाचन एकल वैकल्पिक मत के आधार पर बहुमत श्रेयदायक मतदान की पद्धति के अनुसार गूढ़-शलाका द्वारा होगा।]

श्रीमान्, एकल वैकल्पिक मत के आधार पर बहुमत श्रेयदायक मतदान की पद्धति उस रीति का नाम है जिसका इस अनुच्छेद में विचार प्रस्तुत किया गया है। यह नियम है कि एकल संक्राम्य मत के आधार पर अनुपाती प्रतिनिधान का प्रयोग उन निर्वाचनों में होता है जिनमें निर्वाचन-क्षेत्रों द्वारा कई सदस्यों का निर्वाचन होता है और निर्वाचकों में से अपनी संख्या के अनुपातानुसार अल्पसंख्यक-वर्गों को अपने प्रतिनिधि भेजने का विशेषाधिकार होता है। यह कहा गया है कि आयरलैंड में प्रधान का निर्वाचन एकल संक्राम्य मत द्वारा होता है। मेरा निवेदन है कि अन्यत्र जो कुछ होता है उसको वेदवाक्य के प्रमाण के समान नहीं मानना चाहिये। इस संशोधन से ही सभा यह समझ गई होगी कि जब कि एक पद के लिये एक व्यक्ति का निर्वाचन होता है और केवल एक ही रिक्त पद है जिसकी पूर्ति की जायेगी तो अल्पसंख्यक-वर्गों का कोई प्रतिनिधान नहीं हो सकता। यही अनुपाती प्रतिनिधान है। एक व्यक्ति में उनका क्या अनुपात हो सकता है—वह व्यक्ति तो किसी का एक दल का होगा। अनुपाती प्रतिनिधान द्वारा चुने गये एक प्रधान में अल्पसंख्यक-वर्गों का कोई प्रतिनिधान नहीं होगा। जब तक कि निर्वाचन-क्षेत्रों में कई सदस्य न चुने जायें तब तक अनुपात का प्रश्न ही नहीं आता। अत: वह अनुपाती प्रतिनिधान तो नहीं है क्योंकि वह (प्रधान) 'representative' (प्रतिनिधि) है; संभव है कोई आलोचक कोष देखे—परन्तु साधारण वार्तालाप में एक प्रतिनिधि को 'representative' (प्रतिनिधि) कहा जाता है। यदि एक व्यक्ति से अधिक व्यक्ति हैं तब उनको 'representation' (प्रतिनिधान करने वाले) कहा जा सकता है। एक को 'representation' (प्रतिनिधान करने वाले) नहीं कहा जा सकता।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र** (पश्चिम बंगाल : जनरल): बहुमत श्रेयदायक पद्धति क्या है?

***श्री महावीर त्यागी:** मैं उस पर आ रहा हूं। एक व्यक्ति का निर्वाचन करने वाला निर्वाचन-क्षेत्र न अनुपाती है क्योंकि अल्पसंख्यक-वर्ग को एक स्थान में से कोई अनुपात नहीं मिल सकता और न वह प्रतिनिध्यात्मक है क्योंकि प्रतिनिध्यात्मक से सदैव कुछ व्यक्तियों के एक समूह से आशय है न कि अकेले एक व्यक्ति

[श्री महावीर त्यागी]

से। अत: न तो वह अनुपाती ही है और न है प्रतिनिध्यात्मक और न यह संक्राम्य मत-पद्धति ही है। संक्राम्य मत से उस मत का अर्थ है जिसका संक्रामण एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को उस रीति से किया जा सके जिसका वर्णन एकल संक्राम्य मत-पद्धति में किया गया है। एक उम्मीदवार के मतों का शेष भाग उसके निर्वाचन के पश्चात् दूसरे उम्मीदवार को दे दिया जाता है। यहां शेष मतों के संक्रामण करने का प्रश्न ही नहीं है। केवल एक ही उम्मीदवार है। समस्त मतदान वैकल्पिक होगा अत: यदि एक उम्मीदवार हार जाता है और उसका नाम हटा दिया जाता है तो हारे हुये उम्मीदवार के नाम से आये हुये मत का परिवर्तन हो जाता है; मतदाता के प्रथम विकल्प के स्थान में उसका मत द्वितीय विकल्प के लिये हो जाता है। अत: यह पद्धति यद्यपि अनुपाती कही जाती है पर वास्तव में अनुपाती है नहीं। न यह प्रतिनिध्यात्मक है जैसा कि मैं अभी बता चुका हूं। न यह "single vote" (एक मत-पद्धति है)। जिस रूप में यह है राज्य के विधान-मण्डलों के प्रत्येक मतदाताओं को 99.8 या 99.7 मत देने का अधिकार होगा। यहां इस दशा में एक व्यक्ति को मत देने का अधिकार नहीं है जैसा कि एकल संक्राम्य मत-पद्धति में होता है। सर्वप्रथम राज्य की समस्त जनसंख्या में 1000 का भाग दिया जायेगा और भागफल में पुन: प्रान्त के निर्वाचन निकाय के मतदाताओं की संख्या से भाग दिया जायेगा। इसका यह आशय हुआ कि सभा का एक सदस्य 100 मत दे सकता है 100 से अधिक नहीं—चाहे वह 99 दशमलव कुछ हो। मुझे यह भी बताना चाहिये कि उपखण्ड (ख) में यह कहा गया है:

> "एक सहस्र के उक्त गुणितों को लेने के पश्चात् यदि शेष पांच सौ से कम न हो तो इस खण्ड के उपखण्ड (क) में निर्दिष्ट प्रत्येक सदस्य के मतों की संख्या में एक और जोड़ दिया जायेगा।"

यहां कदाचित कार्यालय की त्रुटि से वे यह बताना भूल गये कि यदि शेष आधे से कम है तो उसका क्या होगा। जब तक आप यह न कहें कि आधे से कम पर ग़ौर नहीं किया जायेगा या उसकी उपेक्षा की जायेगी तब तक प्राधिकारी उसकी उपेक्षा नहीं करेंगे। जैसा कि उपखण्ड (ग) में आपने कहा है कि आधे से अधिक भिन्न को बढ़ाकर एक गिना जायेगा और अन्य भिन्नों की उपेक्षा की

जायेगी, ऐसा ही कुछ आपको उपखण्ड (ख) में भी कहना चाहिये। अन्यथा इस उपखण्ड (ख) के शब्दों के यथार्थ पालन किया जायेगा और राज्यों और प्रान्तों की विधान-सभाओं के प्रत्येक सदस्य के केवल 99 दशमलव कुछ अंक अथवा 98 दशमलव कुछ अंक तक ही मत नहीं होंगे वरन् 98.0032 इत्यादि तक हिसाब बढ़ाया जा सकता है। अत: एकल संक्राम्य मत की जटिल पद्धति के क्रियाकरण में एक और बड़ा दोष आ जायेगा। औसतन राज्य-विधान-मण्डलों के 3300 प्रतिनिधि होंगे और उनमें से प्रत्येक का केवल एक ही मत नहीं होगा उसके बहुत से मत होंगे। मत समान संख्या में नहीं होंगे; किसी सदस्य के 98 दशमलव कुछ मत होंगे, किसी दूसरे राज्य में केवल 80 ही हो सकते हैं। अत: प्रत्येक सदस्य के जितने मत होंगे और जितने वह देगा उनकी संख्या भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न होगी।

यहां यह भी नहीं बताया गया है कि मतदाता के जितने मत हैं वे सब केवल एक उम्मीदवार को ही दिये जायेंगे। श्रीमान्, इस खण्ड के वर्तमान रूप के प्रभाव पर मैं माननीय डॉ. अम्बेडकर का ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। विधान-सभा के प्रत्येक सदस्य के कुछ मत होंगे जो भिन्न-भिन्न विधान-मण्डलों में भिन्न-भिन्न होंगे। मुझे बहुत दु:ख है कि माननीय डॉ. अम्बेडकर ध्यान नहीं दे रहे हैं।

***उपाध्यक्ष:** डॉ. अम्बेडकर, श्री त्यागी कुछ बातों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं एक बात की ओर ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं। प्रान्त और राज्यों के विधान-मण्डलों के सदस्यों की संख्या लगभग 3300 होगी और·····।

***श्री एस. नागप्पा:** श्रीमान्, क्या एक माननीय सदस्य दूसरे माननीय सदस्य को सम्बोधन कर सकता है? उन्हें अध्यक्ष को सम्बोधन करना चाहिये।

***श्री महावीर त्यागी:** मैं अध्यक्ष को सम्बोधन कर रहा हूं। मैं माननीय सदस्य का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं कि·····।

***उपाध्यक्ष:** श्री नागप्पा, कृपाकर अपना स्थान ग्रहण करें।

***श्री महावीर त्यागी:** इस हिसाब के अनुसार प्रान्तों और राज्यों के विधान-मण्डलों में लगभग 3300 सदस्य होंगे। हर-एक को एक ही मत का अधिकार नहीं होगा। प्रत्येक को इतनी संख्या में मत देने का अधिकार होगा जितनी संख्या राज्य की जनसंख्या में 1000 का भाग देने के पश्चात्, भागफल में पुन: राज्य के विधान-मण्डलों के सदस्यों का भाग देने से आती है। इसका यह अर्थ है कि प्रत्येक सदस्य का एक मत नहीं होगा वरन् यहां तक कि 98 या 97 या 80 तक मत होंगे। ऐसी पद्धति को आप किस प्रकार एकल संक्राम्य मत-पद्धति कह सकते हैं?

मैं एक और दोष से बचना चाहता हूं जिस पर शायद कोई ध्यान नहीं दिया गया है। आपने यह नहीं कहा है कि ये सब मत एक ही उम्मीदवार को दिये जायेंगे। मान लीजिये मैं संयुक्तप्रान्त के विधान-मण्डल का सदस्य हूं और मुझे 98.5 मत देने का अधिकार है और एक स्थान के लिये चार उम्मीदवार हैं। आपने यह नहीं कहा है कि मैं अपने सब मत एक ही उम्मीदवार को दूं। मैं अपने 90 मत एक उम्मीदवार को दे सकता हूं, 4 दूसरे को और 5 तीसरे को। इस प्रकार मैं अपनी इच्छा के अनुसार अपने मतों को बांट सकता हूं। आपने यह तो कहा है कि प्रत्येक सदस्य के 98 मत होंगे पर आपने यह नहीं कहा है कि इन सब मतों को एक ही उम्मीदवार को दिया जायेगा। ऐसा होते हुये आपका एकल संक्राम्य मत किस प्रकार टिक सकता है? मैं आपसे निवेदन करूंगा कि आप इस बात पर ध्यान दें और इस कार्यालय की त्रुटि को कृपा कर सही करें। आपने यह नहीं कहा कि सब मत एक साथ एक ही उम्मीदवार को दिये जायेंगे और उनको अनेकों उम्मीदवारों में नहीं बांटा जा सकता।

दूसरी बात यह है कि एकल संक्राम्य मत-पद्धति यहां लागू नहीं होती है क्योंकि किसी व्यक्ति को भी एक मत देने का अधिकार नहीं है, प्रत्येक को अनेकों मत देने का अधिकार है। राज्य के विधान-मण्डलों में मतदाताओं की संख्या 3300 होगी और समस्त मतों की संख्या 3,30,000 होगी। और फिर यहां संसद् में 735 मतदाताओं द्वारा उतनी ही संख्या में मत दिये जायेंगे। आयरलैंड में एकल संक्राम्य मत-पद्धति उपयुक्त हो सकती है क्योंकि वहां प्रत्येक मतदाता को एक मत देने का अधिकार है। पर यहां वह उपयुक्त नहीं हो सकती है क्योंकि वहां प्रत्येक व्यक्ति को एक मत देने का अधिकार नहीं है वरन् अनेक

मत देने का अधिकार है और विधान-मण्डल के सदस्यों को जितने मत देने का अधिकार है वह भिन्न-भिन्न प्रान्तों अथवा भिन्न-भिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है।

अब मैं उस प्रस्ताव पर आता हूं जो मैंने रखा है। मेरा प्रस्ताव यह है:

"The election of the President shall be held by secret ballot and in accordance with the system of majority preferential voting by the single alternative vote."

(प्रधान का निर्वाचन एकल वैकल्पिक मत के आधार पर बहुमत श्रेयदायक मतदान की पद्धति के अनुसार गूढ़-शलाका द्वारा होगा।)

इस पद्धति के अनुसार मतों का संक्रामण एक उम्मीदवार से दूसरे उम्मीदवार को हो सकता है और जिस उम्मीदवार को सबसे कम मत प्राप्त होंगे उसको चुनाव में से अलग कर दिया जायेगा और उसके मतों का परिवर्तन कर दिया जायेगा तथा उसकी इच्छा के अनुसार उन मतों की गणना उससे अधिक मत पाने वाले उम्मीदवार के पक्ष में की जायेगी। और इस प्रकार उम्मीदवारों को अलग करते चल जायेंगे तब तक कि केवल एक ही उम्मीदवार न रह जाये। उसको निर्वाचित घोषित कर दिया जायेगा। अत: मैं निवेदन करता हूं कि मेरी पदावली अधिक उपयुक्त है, यद्यपि रीति लगभग वही ही रहेगी। केवल पारिभाषिक कठिनाई है जिसको मैं बता चुका हूं।

***बेगम ऐज़ाज़ रसूल** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करती हूं:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (3) में से 'accordance with the system of proportional representation' (अनुपाती प्रतिनिधान रीति के अनुसार) शब्दों को निकाल दिया जाये।"

मेरे तर्क न्यूनाधिक रूप से पूर्ववक्ता के भाषण में आ गये हैं। जिस उद्देश्य से मैं यह संशोधन पेश करती हूं वह यह है कि अनुपाती प्रतिनिधान की पहली शर्त यह है कि निर्वाचक क्षेत्र बहुसदस्य निर्वाचक हों। यदि केवल एक ही व्यक्ति का निर्वाचन किया जाता है तो अनुपाती प्रतिनिधान का प्रश्न ही नहीं उठता और इस विषय को श्री त्यागी ने अच्छी तरह से स्पष्ट कर दिया है। अत: उनके तर्कों को दुहरा कर मैं सभा का समय नहीं खोना चाहती हूं। शायद यह

[बेगम ऐज़ाज़ रसूल]

समझा गया है कि इस निर्वाचन में एकल संक्राम्य मत-पद्धति-लाभदायक होगी क्योंकि उससे आशय यह लिया होगा कि जिस उम्मीदवार को सब से कम मत मिलेंगे उसको अलग कर दिया जायेगा। मैं उस निर्वाचक-क्षेत्र में अनुपाती प्रतिनिधान का उदाहरण दूंगी जो बहुसदस्य निर्वाचक-क्षेत्र है। मान लीजिये 100 मतदाता हैं और 5 सदस्यों का निर्वाचन करना है और दल 'क' को 50, दल 'ख' को 25 और दल 'ग' को 25 मत मिलते हैं, तो साधारण निर्वाचन में तो समस्त उम्मीदवार दल 'क' के चुने जायेंगे और अनुपाती प्रतिनिधान में दल 'क' के 3, दल 'ख' का 1 और दल 'ग' का 1 चुना जायेगा। विचार यह है कि मतदाताओं का अनुपात निर्वाचित व्यक्तियों की संख्याओं में विम्बित होता है। इसके लिये यह आवश्यक है कि एक स्थान से अधिक स्थान हो, परन्तु जब स्थान केवल एक ही है तो उस स्थान में निर्वाचक-मण्डल के अनुपात का किस प्रकार निर्वाह किया जा सकता है क्योंकि एक स्थान के 3 या 2 भाग नहीं हो सकते हैं? अत: मेरा विश्वास है कि अनुपाती प्रतिनिधान की यह पद्धति प्रधान के निर्वाचन के लिये वास्तव में सही नहीं होगी और अल्पसंख्यक-वर्ग जिस प्रकार से बहुसदस्य निर्वाचक-क्षेत्र में अपना उम्मीदवार भेज सकता था उस प्रकार से इस निर्वाचक-क्षेत्र में, जिसमें केवल एक ही सदस्य चुना जायेगा, नहीं भेज सकेगा। इस कारण मैंने यह संशोधन पेश किया है।

(संशोधन संख्या 1080, 1081 और 1082 पेश नहीं किये गये।)

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): श्रीमान्, संशोधन संख्या 1083 के स्थान में मैं सूची 1 (चतुर्थ सप्ताह) के संशोधन संख्या 25 को पेश करने का प्रस्ताव करता हूं क्योंकि वह संशोधन माननीय सदस्य डॉ. अम्बेडकर को मान्य है।

मैं यह प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधन की सूची में संशोधन संख्या 1083 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये:

कि अनुच्छेद 44 की व्याख्या के स्थान में निम्न व्याख्या रखी जाये:

'Explanation—In this article, the expression "population" means the population as ascertained at the last preceding

census of which the relevant figures have been published."

(*व्याख्या*—इस अनुच्छेद में 'जनसंख्या' से अन्तिम पूर्ववर्ती जनगणना में निश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके अंक प्रकाशित हो चुके हैं।)

इस संशोधन में संशोधन संख्या 1081 और 1083 के आशय आ जाते हैं। डॉ. अम्बेडकर द्वारा प्रस्तुत संशोधन संख्या 1081 में व्याख्या के प्रथम भाग को हटाने का विचार रखा गया है। संशोधन संख्या 1083, जो मेरे नाम से था, उसके द्वारा व्याख्या के अन्तिम भाग में कुछ महत्वपूर्ण शाब्दिक परिवर्तन करने का विचार रखा गया है और जिस संशोधन को मैंने अभी पेश किया है उसमें इन दोनों संशोधनों के प्रयोजनों को मिला दिया गया है।

व्याख्या के प्रथम भाग के हटाने से सम्बन्धित विषय पर, जो डॉ. अम्बेडकर के संशोधन के अनुकूल है, मैं कुछ नहीं कहना चाहता हूं। मैं विचार संशोधन के केवल उसी भाग पर प्रकट करूंगा जिससे मेरा सम्बन्ध है। सभा कृपया इस बात पर ध्यान दे कि अनुच्छेद 44 प्रधान के निर्वाचन से सम्बन्ध रखता है। अनुच्छेद 43 द्वारा यह प्रयास किया गया है कि केन्द्र के संसदागारों के सदस्यों को तथा राज्य-विधान-मंडलों के निर्वाचित सदस्यों को प्रधान के निर्वाचन में मत देने का अधिकार हो। परन्तु व्याख्या के मूलरूप में यह दिया गया है कि इस जनसंख्या से "अन्तिम पूर्ववर्ती जनगणना" में निश्चित हुई जनसंख्या अभिप्रेत है। मेरा निवेदन है कि मूल व्याख्या से कुछ कठिनाई पैदा हो जायेगी; उदाहरण के रूप में हो सकता है कि निर्वाचन करते समय 'अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना' के अंक ही प्राप्त न हो सकें। उदाहरणार्थ, यदि जनगणना पहली जनवरी सन् 1951 ई. को हो, जैसी कि साधारणतया आशा की जाती है और यदि फरवरी या मार्च 1951 में अर्थात् जनगणना के दो या तीन माह के भीतर प्रधान का निर्वाचन हो तो अंतिम पूर्ववर्त्ती 'जनगणना' के अंक प्राप्त नहीं हो सकेंगे। जनगणना के अंकों को तैयार करने और प्रकाशित करने में एक वर्ष लग जाता है। अतः यदि हम व्याख्या की पदावली को इसी रूप में रहने दें, जिस रूप में वह है, तब तो हम अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना द्वारा निश्चित जनसंख्या के अनुपात में राज्य-विधान-मण्डलों के सदस्यों के मत नियत करने के लिये बाध्य होंगे। परन्तु

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

इस प्रयोजन के लिये हमें अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना के अंक प्राप्त नहीं होंगे। इसका फल यह होगा कि प्रधान का निर्वाचन नहीं हो सकेगा। इन परिस्थितियों के कारण मैंने इस संशोधन को प्रस्तुत किया है कि हम उस अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना के अंकों का प्रयोग करें 'जिसके अंक प्रतिशत हो चुके हैं'। इन शब्दों के रखने से वह कठिन स्थिति उत्पन्न नहीं होगी। यदि उस जनगणना के अल्पकाल के भीतर निर्वाचन किया जाता है जिसके अंक प्राप्त नहीं हुये हैं तब इस संशोधित व्याख्या द्वारा सन् 1941 की जनगणना के अंकों का प्रयोग किया जा सकेगा। इस प्रकार वह कठिन स्थिति दूर हो जायेगी जिसको हम अन्य किसी प्रकार से दूर नहीं कर सकते थे क्योंकि निर्वाचन के लिये हमें निश्चित अंकों की आवश्यकता होगी। इन परिस्थितियों में मैं निवेदन करता हूं कि इस संशोधन को स्वीकार किया जाये।

***उपाध्यक्षः** इस अनुच्छेद पर अब सामान्य वाद-विवाद हो सकता है।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** उपाध्यक्ष, श्रीमान्, इस खण्ड को पूर्णतया निकालने के लिये मैंने एक संशोधन भेजा था जो स्पष्टतया नियम विरुद्ध था अतः उसको नियम-विरुद्ध घोषित कर दिया गया। उस संशोधन को पेश करने से मेरा इस बात की ओर संकेत करने का उद्देश्य था कि यह पूरा अनुच्छेद केवल एक बड़ी जटिल तथा किसी राज्य को ठीक-ठीक कितने मतों का अधिकार होगा, इस सम्बन्ध में भयंकर झगड़ों की सम्भावना उत्पन्न करने वाले एकतन्त्र की ही स्थापना नहीं करता है, वरन् इस अनुच्छेद से उस मूल प्रयोजन का भी खण्डन हो जायेगा जिसके लिये एकल संक्राम्य मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान का विचार रखा गया था। एकल संक्राम्य मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान इस उद्देश्य से रखा गया है कि विधान-मण्डल में राजनैतिक विचारधारा के समस्त रूपों, समस्त भिन्न-भिन्न हितों और देश के समस्त विभिन्न मतों का बिम्ब हो, पर शर्त यह है कि वे एक नियत संख्या में अपना समुदाय बना सकें, चाहे वह संख्या 50,000 हो अथवा 1,00,000 अथवा उतनी हो जितनी विधान सभा अथवा ऐसी ही बड़ी संस्थाओं में अपनी आवाज़ पहुंचाने के लिये पर्याप्त समझी जाये। अतः मैं निवेदन करता हूं कि अनुपाती प्रतिनिधान वहां उपयुक्त नहीं होता है जहां कि निर्वाचन प्रशासन मुखिया का हो और जहां कि केवल एक ही व्यक्ति का निर्वाचन हो। मैं इस बात से सहमत हूं कि बहुत से उम्मीदवारों को लाकर आप

इसको अनुपाती आधार पर क्रियान्वित कर सकते हैं और श्रेय-क्रम के अनुसार एक उम्मीदवार के मतों का दूसरे उम्मीदवार के लिये संक्रमण हो जाता है। इसका कुछ ऐसा प्रभाव होगा कि आपका अन्तिम रूप में निर्वाचित प्रधान वह हो सकता है जो, मान लीजिये कि, प्रथम स्थिति में एक तिहाई सदस्यों द्वारा चुना हुआ प्रतिनिधि था, द्वितीय स्थिति में दशांश सदस्यों द्वारा और यदि तीन ही उम्मीदवार हैं तो तृतीय स्थिति में द्वादशांश सदस्यों द्वारा चुना गया था। इस प्रकार से वह अल्पसंख्यक-वर्ग का प्रतिनिधि हुआ न कि बहुसंख्यक-वर्ग का।

बम्बई विश्वविद्यालय में अनुपाती प्रतिनिधान का मुझे कुछ अनुभव हुआ है और मुझे यह विदित हुआ है कि यहां तक कि नौ, दस, बारह और पन्द्रह तक के निम्न श्रेयों को गिना गया। क्या आप अपने प्रधान को संक्रामण द्वारा निर्वाचित करना चाहते हैं जिससे कि किसी दल के पन्द्रहवें विकल्प तक को अन्त में सफलता मिल सके और प्रधान का अन्ततः निर्वाचन हो जाये? वह प्रथम स्थिति में बहुमत का भी प्रतिनिधि नहीं होगा। अनेकों संक्रामणों द्वारा वह बहुमत का प्रतिनिधि होगा, चाहे प्रथम स्थिति में वह वास्तव में अल्पमत का ही प्रतिनिधि हो। राष्ट्रीय दृढ़ता के हित के लिये यह अवांछनीय है।

कोई सुसंगठित अल्पसंख्यक-वर्ग किसी विशेष व्यक्ति अथवा उम्मीदवार को क्रम में बनाये रखने के लिये पर्याप्त मात्रा में मत प्राप्त कर सकता है और अनेकों संक्रामणों के पश्चात् वह (उम्मीदवार) अन्त में पूर्ण बहुमत प्राप्त कर लेता है। यह भ्रमात्मिक तथा बहुत ही संदिग्ध बहुमत होगा जिसमें देश के एक बड़े भाग का प्रतिबिम्ब नहीं होगा। मुझे ऐसा भी लगता है कि उम्मीदवारों की सूची में अन्तिम स्थान में किसी व्यक्ति के होने पर उससे ऊपर वाले उम्मीदवारों के पक्ष में मतों का संक्रामण तथा पुनः संक्रामण करने के लिये जिस तंत्र की आवश्यकता है उसमें स्वयं जो कठिनाइयां उत्पन्न होंगी उनके मुकाबले में वे कठिनाइयां मुझे कहीं अधिक प्रतीत हैं जो कि मतदाताओं की अधिक संख्या के कारण हो सकती हैं और जिनका जिक्र पिछली बार किया गया था। मुझे ऐसा लगता है कि उन कठिनाइयों को व्यर्थ ही अतिरंजित करके कहा गया है कि 20 करोड़ मतदाताओं के मत लेने से निर्वाचन असम्भव हो जायेगा। 20 करोड़ मतदाता एक ही स्थान पर एक ही समय मत नहीं देंगे। यह असम्भव है। परन्तु 20,000 केन्द्रों में बंटे हुए 20 करोड़ मतदाताओं से प्रत्येक केन्द्र में अपने-अपने हिस्से के मतदाताओं का मत लेना कोई ऐसा कठिन कार्य नहीं है जो असम्भव

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

हो। अत: हमें यह बात कि राज्य के प्रधान का निर्वाचन करने में वास्तविक लोकप्रिय प्रतिनिधान असम्भव है, पूर्णतया अस्वीकार कर देना चाहिये। और न मेरे विचार से इस कार्य के लिये प्रशासी तंत्र की व्यवस्था करनी ही कठिन है। यदि आप इस देश में केन्द्र की अथवा प्रान्तों की प्रतिनिधात्मक संस्थाओं के प्राचीन इतिहास पर दृष्टि डालें तो केवल चालीस या पचास वर्ष पूर्व से ही आपको यह विदित होगा कि प्रत्येक परिवर्तन में निर्वाचक-गण आठ गुने या दस गुने या बीस गुने हो गये और जिनके यह विचार थे कि निर्वाचक-गणों के केवल बृहद् आकार-प्रकार के कारण ही निर्वाचन करना असम्भव हो जायेगा, वे झूठे भविष्यवक्ता सिद्ध हुये।

गत बार निर्वाचक-गण कुछ लाखों से साढ़े तीन करोड़ हो गये अर्थात् लगभग 100 गुने बढ़े। और यदि ऐसे किसी सुझाव को, जिसे सभा के समक्ष प्रस्तुत करने का मुझे सम्मान प्राप्त हुआ है, स्वीकार किया गया तो आप उसको केवल सतगुना या अठगुना और बढ़ा देंगे। वह कोई ऐसी कठिनाई नहीं होगी जिसे पार न किया जा सके।

हर हालत में अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली से जो कठिनाई उत्पन्न होगी उसके कारण और इस विचार के कारण कि वास्तव में बहुमत के प्रथम चुनाव का सदस्य प्रधान न हो सके, राज्य के प्रधान को जो आदर और सम्मान प्राप्त होना चाहिये, उसमें कमी हो जायेगी।

अत: उन अन्य कठिनाइयों के अलावा, जिनको संशोधन पेश करने वालों ने सभा के सामने रखा है, मैं निवेदन करता हूं कि अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली स्वयं सभा को यह प्रतीति करा देगी कि यदि वह दुष्टतापूर्ण नहीं है तो बहुत संकटास्पद तो है ही और इस कारण उसकी उपेक्षा की जानी चाहिये।

यदि आप चाहते हैं तो अपने विधान-मण्डलों के निर्माण में उसे अवश्य रखें। यदि आप चाहते हैं तो अन्य समान संस्थाओं के निर्माण में उसे अवश्य रखें। परन्तु जब आप राज्य के अथवा संघ के अन्तर्गत किसी प्रदेश के मुखिया को चुनते हैं तब आपको अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली का बहिष्कार करना चाहिये क्योंकि वह ऐसी दुधारी तलवार है, जो दोनों ओर काट करती है। वह समस्त मतों का प्रतिनिधान भी कर सकती है और साथ ही साथ वह किसी ऐसे व्यक्ति को भी मुखिया के पद पर बिठा सकती है जो प्रथम स्थिति में केवल अल्पमत का ही प्रतिनिधि हो।

इन आधारों पर मैं अनुपाती प्रतिनिधान के सिद्धान्त को हटाने वाले संशोधन का समर्थन करता हूं और इस बात का समर्थन करता हूं कि इस अनुच्छेद में तदनुकूल संशोधन किया जाये।

***श्री ए.वी. ठक्कर** (काठियावाड़ का संयुक्त राज्य सौराष्ट्र): उपाध्यक्ष, श्रीमान्, मैं अनुपाती प्रतिनिधान के प्रश्न पर बोलना नहीं चाहता हूं पर 'अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना' के विषय पर बोलना चाहता हूं। यह विख्यात है कि 1941 की जनगणना के पश्चात् देश की जनसंख्या में विशेषकर कुछ प्रान्तों की जनगणना में भारी परिवर्तन हो गये हैं। मैं इस सम्बन्ध में पूर्वी पंजाब और पश्चिमी बंगाल का उल्लेख कर सकता हूं। मैं संयुक्तप्रान्त और बम्बई में जो थोड़े-बहुत परिवर्तन हुये हैं उनका भी उल्लेख करना चाहता हूं। इन प्रान्तों में हिन्दू, सिख तथा अन्य लोग बड़ी-बड़ी संख्याओं में आ गये हैं और इन चार प्रान्तों की सामान्य जनसंख्या बहुत कुछ बढ़ गई है। साथ ही साथ मुसलमानों की एक बड़ी संख्या इन चारों प्रान्तों को छोड़कर पाकिस्तान चली गई है। अत: 1941 की जनगणना इन चारों प्रान्तों में रहने वाले लोगों की संख्या का ठीक-ठीक प्रतिनिधान नहीं करती है। मैं यह निवेदन करना चाहता हूं कि यदि विवेकपूर्ण देखा जाये तो अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना अर्थात् 1941 की जनगणना का बहुत कम मूल्य है। अत: सरकार को या तो विशिष्ट रूप से इस विधान के प्रयोजनार्थ समस्त देश की जनगणना कराने का प्रबन्ध करना चाहिये या इन चार प्रान्तों की नवीन जनगणना कराने का शीघ्र प्रबन्ध करना चाहिये। यह भी सुझाव रखा जा सकता है कि 1951 की जनगणना एक वर्ष पूर्व कर ली जाये अर्थात् 1951 के अलावा 1950 में कर ली जाये। या उन चार प्रान्तों की विशेष रूप से जनगणना की जाये जिनका मैंने जिक्र किया है और इस जनगणना के आधार पर इन प्रान्तों में स्थानों की संख्या नियत की जाये। यदि ऐसा नहीं किया जाता है तो कुछ समुदायों के साथ बहुत अन्याय होगा।

मैं पंजाब की अनुसूचित जातियों का उदाहरण देना चाहता हूं। पश्चिमी पंजाब में बसने वाली इन लोगों की एक बड़ी संख्या पूर्वी पंजाब में आ गई है और इसके फलस्वरूप वहां उनकी संख्या बहुत बढ़ गई है। वर्तमान जनसंख्या के आधार पर इन जातियों को जितने स्थान मिलने चाहियें, जो कि उनके लिये विशेष

[श्री ए.वी. ठक्कर]

रूप से संरक्षित कर दिये गये थे, उनसे उनको बहुत कम अर्थात् लगभग आधे स्थान ही मिलेंगे। यही बात, परन्तु इससे कुछ कम मात्रा में, पश्चिमी बंगाल की अनुसूचित जातियों पर भी लागू होती है। पूर्वी पंजाब में बड़ी विकट कठिनाई है। यदि पूर्ववर्त्ती जनगणना के अंक मान लिये गये तो इस अल्पसंख्यक वर्ग को अपने आधे स्थान भी नहीं मिलेंगे।

श्री रोहिणी कुमार चौधरी: उप-सभापति जी, आज इस विधान-परिषद् की चौथी बैठक के अन्तिम दिन में अन्तिम काल में नहीं अन्तिम दिन में मैं अपना बयान हिन्दी में करना चाहता हूं। इसका कारण यह है कि में तीन-चार रोज आगे सेठ गोविन्द दास के हिन्दी सम्मेलन में गया था और उस जलसे में मेरे माननीय मित्र मिस्टर प्रकाशम् जी ने हिन्दी में एक ऐसा बयान किया कि सारे भारत के कोने-कोने में उनकी बहादुरी का प्रचार हो गया। वह हिन्दी का बयान ऐसा मीठा था और मधुर और अच्छा था कि सारी दुनिया में आज उनकी बहादुरी और वाहवाही हो गई है। मेरे ख्याल में यह हुआ कि जो दक्खिन में रहने वाले मिस्टर प्रकाशम् जी ऐसा बयान कर सकते हैं तो मैं क्यों नहीं कर सकूंगा·····।

***उपाध्यक्ष:** क्या आप अनुच्छेद 44 पर बोल रहे हैं अथवा अन्य किसी अनुच्छेद पर?

श्री रोहिणी कुमार चौधरी: तो आसाम का होते हुए भी मैं ऐसा क्या हो गया कि नहीं कर सकता? मैं हिन्दी भी नहीं बोल सकूंगा?

***उपाध्यक्ष:** कृपा कर आप अपने समय का इससे अच्छा सदुपयोग करें।

***श्री रोहिणी कुमार चौधरी:** मेरे माननीय मित्र श्री ठक्कर बापा ने अपने भाषण संयुक्तप्रान्त और पंजाब का उल्लेख किया था। वे आसाम को भूल गये। सन् 1941 में लड़ाई बिल्कुल आसाम के निकट आ गई थी और जनगणना बड़ी ही अव्यवस्थित रीति से की गई थी। अत: यह परम आवश्यक है कि आसाम प्रान्त पर भी यह संशोधन लागू हो जिससे कि निर्वाचन के पूर्व हम ठीक-ठीक

अंकों को प्राप्त कर उन पर विचार कर सकें। यदि हम निर्वाचक-गणों की सूचियां तैयार करने के लिये विभिन्न प्रान्तों के वर्तमान अंकों को प्रकट करने वाली जनगणना कर सकें तो उससे बड़ा लाभ होगा। आसाम का उदाहरण लीजिये। आसाम में पूर्वी बंगाल से शरणार्थियों के रूप में जो लोग आये हैं उनकी ठीक-ठीक गणना अब तक नहीं की गई है। हमारा अनुमान है कि इस प्रकार अब तक आसाम में 3 या 4 लाख लोग तो आ चुके हैं। अत: यह आवश्यक है कि प्रान्त के लिये सदस्यों की कुल संख्या नियत करने में इन अंकों पर भी विचार किया जाये। इस समय सिलहट इलाके को छोड़कर आसाम की जनगणना की गई है। परन्तु पूर्वी बंगाल और सिलहट से आसाम में बहुत से लोग आ गये हैं और प्रान्त के स्थानों की कुल संख्या नियत करने में इन लोगों की संख्या पर भी विचार करना चाहिये। निर्वाचक-क्षेत्रों में स्थानों की संख्या नियत करने में भी इस बात पर विचार करना चाहिये। अत: मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह इस सुझाव को स्वीकार करे कि निर्वाचक-क्षेत्रों को परिसीमित करते समय अन्तिम जनगणना के अंकों पर विचार किया जाये।

***पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र:** उपाध्यक्ष, श्रीमान्, अनुच्छेद 44, जिस पर हम इस समय विचार कर रहे हैं, इस बात की व्यवस्था करता है कि जहां तक व्यवहार्य हो, प्रधान के निर्वाचन में जनसंख्या के आधार पर विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधान की मापश्रेणी में एकरूपता होगी। अत: यह अनुच्छेद हितकारी-सा प्रतीत होता है और इस विधान को क्रियान्वित करने के लिये एक दृढ़ आधार का निर्माण करता है। यह अनुच्छेद आनुषंगिक रूप में भारतीय संघ के प्रदेशों के विधान-मंडलों के प्रतिनिधान के लिये व्यवस्था करता है। इस विधान के निर्माता इस परिणाम पर पहुंचे हैं कि विभिन्न राज्यों को जो प्रतिनिधान दिया जायेगा, उसमें वे जहां तक हो सके एकरूपता लाने का प्रयत्न करें। इस अनुच्छेद की व्याख्या में यह कहा गया है कि इस अनुच्छेद में 'जनसंख्या' से अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना में निश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है। इस पर मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने एक संशोधन पेश किया है जो इस प्रकार है: "अन्तिम जनगणना जिसके अंक प्रकाशित हो चुके हैं।" इन शब्दों को "अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना" शब्दों के स्थान में रखना है। मैं समझता हूं कि यह संशोधन मसौदा-समिति के माननीय अध्यक्ष द्वारा स्वीकार किया जायेगा, जिसका सब

[पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

व्यावहारिक प्रयोजनों के लिये यह अर्थ होगा कि वह सभा द्वारा भी स्वीकार किया जायेगा। व्यक्तिगत रूप से मैं यह नहीं समझ पाता हूं कि यह संशोधन किस प्रकार स्थिति में सुधार करता है। मेरे विचार से तो यह स्थिति को और भी बिगाड़ता है। श्रीमान्, साधारण ज्ञान वाला कोई भी व्यक्ति यह समझ सकता है कि "पूर्ववर्त्ती जनगणना" का क्या अर्थ है, परन्तु बिरले ही समझ सकते हैं कि "अन्तिम जनगणना जिसके अंक प्रतिशत हो चुके हैं" इसका क्या अर्थ है।

श्रीमान्, जनगणना के समाप्त हो जाने के पश्चात् यह कोई नहीं कह सकता है कि उसके अंक कब तक प्रकाशित किये जायेंगे। एक वर्ष, दो वर्ष, तीन वर्ष अथवा चार वर्ष तक लग सकते हैं। जब निर्वाचन किया जायेगा तो यह सम्भव है बल्कि मैं तो यह कहूंगा कि यह सम्भाव्य है कि उस विशेष अवसर पर पूर्ववर्त्ती जनगणना आपको ठीक अंक नहीं दे सकेगी क्योंकि उसके प्रकाशन में काफी देर लगती है। अत: मैं नहीं समझ पाता हूं कि इस संशोधन द्वारा स्थिति में किस प्रकार सुधार हो जायेगा। चूंकि जनगणना अधिशासी सरकार का प्रकार्य है और अधिशासी सरकार की आज्ञा से ही जनगणना की जाती है अत: अधिशासी सरकार जब तक इस बात पर गौर करने का ठीक कदम नहीं उठाती है कि गणना के पश्चात् तुरन्त ही उसका प्रकाशन हो जाये, तब तक मेरा विश्वास है कि प्रतिनिधान को एकरूपता देने के लिये जिस संरक्षण की व्यवस्था करने का प्रयत्न किया गया है, वह अधिकांश निष्फल होगा। मैं चाहता हूं कि इस बात पर सावधानी से विचार किया जाये। यह उतनी सरल नहीं है जितनी सरल हम उसे सोचते हैं।

इस प्रश्न के अलावा कि गणना और प्रकाशन साथ-साथ नहीं हो सकेंगे और इन दोनों कार्यों में काफी लम्बे समय का अन्तर होना अवश्यम्भावी है, हमको यह भी देखना चाहिये कि यह किस प्रकार में प्रान्तों के लिये हानिकर होगा। श्रीमान्, हमारी पिछली जनगणना सन् 1941 ई. में हुई थी। मेरे विचार से आसाम के मेरे माननीय मित्र श्री रोहिणीकुमार चौधरी, जिन्होंने हिन्दी में भाषण देना शुरू किया था, परन्तु बीच में बन्द कर फिर अंग्रेजी में बोलने लगे, अपने विषय को आरम्भ से ही अंग्रेजी में बोल कर स्पष्ट कर सकते थे। उन्हें जो बात रखनी थी

दुर्भाग्यवश वे उसे न रख सके। इसमें एक बड़ा महत्त्वपूर्ण प्रश्न निहित है। आसाम, अविभाजित पंजाब, अविभाजित बंगाल, सिन्ध और उत्तर पश्चिमी सीमाप्रान्त जैसे प्रान्तों में, जिनमें मुसलमान जनसंख्या का प्राधान्य था, सन् 1941 की जनसंख्या के अवसर पर अपनी संख्या बढ़ाने की होड़ थी, और सिवाय आसाम के—क्योंकि आसाम के बाबत मुझे पूर्ण विश्वास नहीं है यद्यपि वहां भी मुस्लिम लीग सरकार शक्ति प्राप्त किये हुये थी—अन्य प्रान्तों में जिनका मैंने जिक्र किया है यह सच है कि सम्प्रदायों में अपनी संख्या बढ़ाने का एक रोग लग गया था जिससे कि अनुवर्ती वैधानिक सुधारों में उनको अधिक से अधिक लाभ हो। अन्य प्रान्तों के बाबत मैं नहीं कह सकता हूं क्योंकि उन प्रान्तों में मुसलमान अल्प संख्या में थे और मुस्लिम लीग को शक्ति प्राप्त नहीं थी। जहां तक उन प्रान्तों का सम्बन्ध है जिनका मैंने जिक्र किया है, मैं अपने व्यक्तिगत ज्ञान और अनुभव के आधार पर कह सकता हूं और मेरा ख्याल है कि इन प्रान्तों के सदस्य भी इस बात को प्रमाणित करेंगे कि उन प्रान्तों में ऐसी ही स्थिति थी। जनगणना के कमिश्नर ने भी ऐसी ही बात प्रकट की थी। अत: यदि आज हम सन् 1941 ई. की जनगणना को इन उपरोक्त विशेष प्रान्तों में स्थानों की संख्या नियत करने के लिये प्रमाणस्वरूप मान लेते हैं, तो हमें सचमुच इन प्रान्तों की जनगणना का बड़ा ही भ्रामक चित्र प्राप्त होगा। याद रखिये, अविभाजित बंगाल में विभाजन के पूर्व दस वर्ष से भी अधिक समय तक हिन्दू सम्प्रदाय की कोई भी आवाज नहीं थी, सरकार से अथवा उसके किसी भी महकमे से उसका कोई भी सरोकार न था। किसी भी दशा में उनकी स्थिति महत्त्वपूर्ण नहीं थी और स्थिति उनके सर्वथा विरुद्ध थी। हमने उस समय भी शिकायत की थी और अब भी मैं यह मानता हूं कि सन् 1941 के अंक इन प्रान्तों की वास्तविक जनगणना के प्रतीक किसी प्रकार से भी नहीं है। 15 अगस्त 1947 के पश्चात् इनमें से कुछ प्रान्तों का विभाजन हो गया। बंगाल का विभाजन हुआ और पश्चिमी बंगाल भारतीय संघ में आ गया। पूर्वी पंजाब भारतीय संघ में आ गया। आसाम का विभाजन हुआ और उसका एक भाग आसाम में रहा और एक भाग पाकिस्तान में चला गया। इसके बाद वे भयानक कांड हुये जिनसे सब लोग परिचित हैं और जिनके फलस्वरूप पूर्वी पंजाब में एक भी मुसलमान न रहा और पश्चिमी पंजाब में एक भी हिन्दू न रहा। इन घटनाओं ने हमें इस वर्तमान विधान-परिषद् में पूर्वी

[पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

पंजाब और पश्चिमी बंगाल के प्रतिनिधान की मापश्रेणी में परिवर्तन करने के लिये विवश किया। आज की स्थिति यह है कि आप यह नहीं जानते कि पूर्वी पंजाब में एक भी मुसलमान है या नहीं और पश्चिमी पंजाब में एक भी हिन्दू है या नहीं। सिन्ध से, मैं समझता हूं कि 75 फ़ीसदी से अधिक हिन्दू भारतीय संघ में आ ही गये हैं। जहां तक बंगाल का सम्बन्ध है, पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल में लाखों आदमी आ गये हैं। संख्याओं के प्रति आपका मतभेद हो सकता है। कोई बीस लाख बतायेगा, कोई तीस लाख या इससे भी अधिक परन्तु इस विभाजन के कारण पूर्वी पाकिस्तान से आने वालों की संख्या कम से कम 20 लाख होगी और यह संख्या प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है; क्योंकि आने वालों का तांता अब भी लगा हुआ है। नये विधान के अनुसार जिस समय सामान्य निर्वाचन किया जायेगा, उस समय तक और भी आदमी आ जायेंगे और उनकी संख्या 40 लाख तक हो जायेगी। पूर्वी पाकिस्तान से लोगों का आना सन् 1941 में आरम्भ हुआ। जब जापानियों ने अंग्रेजों से युद्ध छेड़ा उस समय बहुत से लोग पूर्वी बंगाल को छोड़कर नौकरी तलाशने, युद्ध सम्बन्धी नौकरी करने, ठेका लेने तथा ऐसे ही अन्य कार्यों के लिये पश्चिमी बंगाल में आये। उसके पश्चात् 1943 में बंगाल में भयानक अकाल पड़ा और फिर बहुत से लोग पूर्वी पाकिस्तान से कलकत्ता आये जहां पूर्वी बंगाल की अपेक्षाकृत अन्न के दाने प्राप्त करने के अधिक अवसर थे। इस प्रकार 1943 में सबसे अधिक लोग आये और जापानी युद्ध के उपद्रवों से भयभीत होकर जितने लोग पहले आये थे उनसे बहुत अधिक संख्या में ये लोग आये। अत: मैं मसौदा-समिति के अध्यक्ष से निवेदन करता हूं कि वे इन बातों पर सावधानी से विचार करें कि आज पश्चिमी बंगाल की जनगणना सन् 1941 की जनगणना में प्रकाशित तथा निश्चित अंकों के आधार पर निर्धारित न की जाये और यह कि वास्तविक जनसंख्या में इससे बहुत अधिक वृद्धि हो गई है और वह वृद्धि उन कारणों से हुई है जिनका में जिक्र कर चुका हूं। सर्वप्रथम लोगों का आना जापानियों के आक्रमण के कारण हुआ। दुबारा 1943 के अकाल से इसमें वृद्धि हुई। तीसरी बात यह है कि पूर्वी पाकिस्तान के हमारे मित्रों के मित्रवत् व्यवहार से वह समस्त सीमाओं को पार कर गया। अन्तर-अधिराज्य सम्मेलनों में हम चाहे जो कुछ भी निश्चय करें, पर मुझे विश्वास है कि ऐसा हो रहा है और होगा। अत:, श्रीमान्, फल यह होगा कि यदि

समानता के सिद्धान्त पर इस अनुच्छेद में दी हुई रीति के अनुसार सन् 1941 की जनसंख्या के अंकों के अनुसार पश्चिमी बंगाल में स्थान नियत किये जाते हैं, तो इन प्रान्तों के साथ घोर अन्याय होगा और दोनों केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान-मण्डलों में इन प्रान्तों का बहुत ही कम प्रतिनिधान होगा।

यदि आप इससे बचना चाहते हैं और यदि आप चाहते हैं कि पश्चिमी बंगाल और पूर्वी पंजाब प्रान्तों के साथ तथा बम्बई और देहली नगरों के साथ उचित तथा न्यायपूर्ण व्यवहार किया जाये जिनमें कि पाकिस्तान से बहुत से शरणार्थी आ गये हैं और बस गये हैं तथा सन् 1941 की जनगणना के अंकों द्वारा सूचित सामान्य जनसंख्या में बहुत वृद्धि कर चुके हैं, तो सबसे पहला काम सरकार को यह करना चाहिये कि विधान-मण्डलों के निर्माण से सम्बन्धित विधान को लागू करने से पूर्व वह इन प्रान्तों तथा नगरों की एकदर्थ जनगणना कराने की आज्ञा दे दे। मैं समझता हूं कि सामान्य जनगणना सन् 1951 में होगी और मैं यह भी समझता हूं कि वर्तमान सरकार नये विधान के अनुसार सामान्य निर्वाचन को तब तक रोकने के लिये उद्यत नहीं है। वह स्वीकृत विधान के अनुसार निर्वाचन शीघ्र करना चाहती है। यदि सरकार का यह निर्णय बना रहता है कि विधान लागू किया जाय और उसके अनुसार सन् 1951 के पूर्व सामान्य निर्वाचन किया जाये तो यह अत्यन्त आवश्यक है कि इसके पूर्व नई जनगणना हो और पश्चिमी बंगाल, पूर्वी पंजाब, दिल्ली और बम्बई की जनगणना कराने के लिये अभी से आज्ञा दे दी जानी चाहिये। इन प्रान्तों पर बड़ा भारी प्रभाव पड़ेगा और मुझे आशा है कि इस विषय पर सर्वप्रथम मसौदा-समिति के अध्यक्ष गंभीर विचार करेंगे। मुझे विश्वास है कि यदि ऐसा न किया जाये तो जो अन्याय होगा उसे वे समझेंगे। मैं विश्वास करता हूं कि जिस सरकार के वे एक महत्वपूर्ण अंग हैं उसको वे यह सलाह देंगे कि विधान के लागू करने के पूर्व इस प्रस्ताव पर अमल किया जाये।

श्रीमान्, कई अवसरों पर मैंने यहां तथा अन्यत्र इस विषय की प्राधिकारियों को सूचना दी है। इस विषय में मैंने उनसे दया करने और न्याय करने के लिये निवेदन किया है। यदि ऐसा नहीं किया जाता तो जो परिणाम होंगे उनको सभा ध्यान में रखे। यदि सन् 1941 की जनगणना के अंकों के अनुसार कार्य किया गया है तो एक ओर विधान-मण्डलों में हिन्दू समुदाय का बहुत कम प्रतिनिधान होगा और दूसरी ओर मुसलमान समुदाय का बहुत अधिक प्रतिनिधान होगा। यह एक भीषण राजनैतिक अन्याय होगा और मैं सरकार को यह चेतावनी देता हूं कि वह इस बात का ध्यान रखे।

[पण्डित लक्ष्मीकान्त मैत्र]

श्रीमान, मैं यह नहीं कह सकता कि मैं इस संशोधन का अपने पूरे मन से समर्थन करता हूं। मुझे यह विश्वास नहीं कि जिस रूप में यह संशोधन है उस रूप में वह किसी प्रकार से भी स्थिति का सुधार करता है। खैर, सारा मामला सभा पर छोड़ा जाता है और यदि सभा यह समझती है कि मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन से इन बातों में सुधार हो जायेगा तो मुझे कुछ भी नहीं कहना है। मेरा व्यक्तिगत मत यह है कि इससे कोई सुधार नहीं होगा।

***उपाध्यक्ष:** मेरे पास यहां सभा के चार गण्यमान्य सदस्यों की पर्चियां हैं। जहां तक मैं अनुमान कर सका हूं, प्रसंग एक विशेष संशोधन से ही सम्बन्धित है और मेरा यह भी विश्वास है कि इस संशोधन पर यथेष्ट प्रकाश डाला जा चुका है। यदि माननीय सदस्य भाषण देने के अधिकार पर आग्रह करेंगे तो मैं उनको एक-एक करके बुलाने के लिये तैयार हूं। और यदि वे मेरे सुझाव को स्वीकार करने की कृपा करेंगे तो सभा का कार्य शीघ्रतापूर्वक किया जा सकता है। मैं उनके अधिकार में हूं।

***माननीय सदस्यगण:** कुछ देर के लिये और वाद-विवाद करने की आज्ञा दे दी जाये।

***मौलाना हसरत मोहानी** (संयुक्तप्रान्त : मुस्लिम): श्रीमान्, मैं केवल दो मिनट चाहता हूं।

***उपाध्यक्ष:** कृपया माइक पर आइये।

***मौलाना हसरत मोहानी:** उपाध्यक्ष, मैं आज यहां इस अनुच्छेद में तथा निर्वाचन प्रणाली से सम्बद्ध जिन अन्य धाराओं को हमने स्वीकार कर लिया है उनमें जो एक बड़ा भारी दोष है उसे बताने के लिये खड़ा हुआ हूं और वह यह है : भारत में तथा अन्य देशों में जो सामान्य प्रणाली बरती जाती है वह यह है कि यदि एक ही उम्मीदवार है और एक ही स्थान है तो उस उम्मीदवार का स्वत: ही निर्वाचन हो जाता है। मैं समझता हूं कि हमारी निर्वाचन-पद्धति में यह एक बड़ा भारी दोष है। रूस में यदि उम्मीदवार एक है तो भी निर्वाचन होता है

क्योंकि ऐसा हो सकता है कि एक व्यक्ति अन्य प्रतिद्वन्द्वी उम्मीदवारों के नाम कपट से निकलवा दे पर निर्वाचन में निर्वाचक-गण बहुमत से उसका विरोध करें। फिर वह निर्वाचन इस आधार पर नहीं होगा कि एक उम्मीदवार है या एक ही स्थान है। मैं यह कहूंगा कि मैंने इस विधान में एक भी संशोधन नहीं रखा है क्योंकि आरंभ से ही मेरे यह विचार रहे हैं कि सारा का सारा विधान मूर्खतापूर्ण है। मैं उसके प्राधिकार को स्वीकार नहीं करता हूं। मैं इस विधान-परिषद् को सूक्ष्म नहीं समझता हूं और इसी कारण मैंने कोई भी संशोधन नहीं रखा है। मैं केवल एक सुझाव रखता हूं कि इस दोष का निवारण करने के लिये माननीय डॉ. बी. बार. अम्बेडकर तथा उसकी समिति को कुछ न कुछ करना चाहिये और उसी मार्ग को ग्रहण करना चाहिये जो रूस में ग्रहण किया गया है। वहां एक अभ्यर्थी के होने पर भी यह मालूम करने के लिये निर्वाचन किया जाता है कि कहीं बहुमत उसका विरोध तो नहीं करता। यह मानते हुये भी कि उस व्यक्ति का विरोध यथेष्ट सदस्यों द्वारा नहीं होगा, मैं समझता हूं कि उसको स्वतः ही निर्वाचित मान लेने में हम ठीक काम नहीं करते।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, क्या आपकी अनुमति से मैं कुछ शब्द कह सकता हूं?

***उपाध्यक्षः** मैं उस पद्धति को नहीं तोड़ सकता हूं जिसको बड़ी कठिनाई से स्थापित किया गया है। प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना!

***प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): उपाध्यक्ष श्रीमान्, मैं सभा का ध्यान एक बात की ओर आकर्षित करना चाहता हूं, जिसका उल्लेख मेरे माननीय मित्र श्री त्यागी ने किया था। यहां हमने प्रधान के निर्वाचन के लिये अनुपाती प्रतिनिधान की व्यवस्था की है। मैं समझता हूं कि इस खंड में कुछ त्रुटि है। एकल-संक्राम्य मत द्वारा ही अनुपाती प्रतिनिधान हो सकता है, पर यहां प्रत्येक सदस्य को एक से अधिक मत मिलेंगे और उनकी गणना एक पूर्ण तथा जटिल विधि के अनुसार होगी और मैं नहीं समझता कि ऐसी दशा में अनुपाती प्रतिनिधान हो सकता है। मैं समझता हूं कि श्री त्यागी ने ठीक ही कहा है कि प्रथम दशा में प्रधान को निर्वाचित केवल कम मत पाने वाले अभ्यार्थियों को गिनती से छोड़ते चले जाने से ही हो सकेगा। मतदान होना चाहिए और जिस व्यक्ति को

[प्रो. शिब्बन लाल सक्सेना]

सबसे कम मिलें उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। तत्पश्चात् शेष उम्मीदवारों के लिए फिर मतदान लिया जाये और सबसे कम मत पाने वाले उम्मीदवार की उपेक्षा की जाये। इस प्रकार बचे हुए दो उम्मीदवारों में से जिस व्यक्ति को अधिक मत मिलें, उसका निर्वाचन किया जाये। यही एक रीति है जिसके द्वारा बहुमत से एक व्यक्ति का निर्वाचन किया जा सकता है। अनुपाती प्रतिनिधान प्रणाली कोई सीधी-सादी प्रणाली नहीं है। खासतौर से उस अवस्था में तो है ही नहीं जब कि केन्द्रीय संसद् के मतदाताओं को प्रान्तीय विधान-मंडल के सदस्यों से अधिक संख्या में मत देने का अधिकार है। इसमें यह होगा कि केन्द्रीय विधान-मंडल के मतदाता अपना प्रथम वैकल्पिक मत एक व्यक्ति को देंगे और इसी प्रकार प्रान्तीय विधान-मंडलों के सदस्य किसी अन्य व्यक्ति को, और उस वैकल्पिक मतों का अन्य सदस्यों को जब संक्रामण किया जायेगा, तो उसकी गणना करना बड़ा कठिन होगा क्योंकि उसकी रीति विभिन्न है। अतः मैं समझता हूं कि मसौदा-समिति इस विषय पर फिर विचार करेगी और जिस प्रणाली को मैंने बताया है उसको उसके स्थान में ग्रहण करेगी। इस प्रकार हमें इस बात का विश्वास हो सकता है कि जिस व्यक्ति का निर्वाचन होगा, उसे वास्तव में बहुमत प्राप्त हुआ है न कि केवल 50 प्रतिशत से कम मत संख्या मिली है। मैं समझता हूं कि इस अनुच्छेद में एक यह परिवर्तन होना चाहिए।

श्रीमान्, जनगणना के बारे में भी मुझे ऐसा लगता है कि गत 10 वर्ष में जनसंख्या के अंकों में बहुत परिवर्तन हो गये हैं, विशेषकर बड़े-बड़े शहरों में। मैं जानता हूं कि कानपुर में सन् 1941 में जनसंख्या चार लाख थी और अब लगभग 10 लाख है। मैं नहीं जानता कि कानपुर के लिये और अन्य ऐसे ही बड़े नगरों के लिए कितने स्थान नियत किये जायेंगे। मैं यह भी जानता हूं कि शरणार्थी, जो अन्य प्रान्तों से लगभग एक करोड़ की संख्या में आये हैं, वे सभी प्रान्तों में बंट गये हैं। अतः मैं आदरणीय ठक्कर बापा से सहमत हूं कि निर्वाचन के पूर्व जनगणना होनी चाहिये। हम निर्वाचन में वयस्क-मताधिकार के सिद्धान्त का अनुसरण करने के लिये तैयार हैं। विभिन्न समुदायों की संख्या के आधार

पर प्रथम अवधि के लिये हम स्थान नियत कर सकते हैं। 33 करोड़ की जनसंख्या में से आपके पास 15 करोड़ मतदाता होंगे और विभिन्न समुदायों के मतदाताओं के अनुपात के अनुसार स्थानों को बांट दिया जायेगा। मैं समझता हूं कि यह रीति अच्छी है। यह भी हो सकता है कि हम अनुपाती प्रतिनिधान को पूर्णतया समाप्त कर दें। यह भी कठिनाइयों से मुक्त होने की एक रीति है; परन्तु फिर भी विभिन्न प्रान्तों में स्थान बांटने में कठिनाई होगी। मैं समझता हूं कि यह एक सामान्य कठिनाई है और इसके निराकरण के लिये कुछ करना चाहिये।

मि. नजीरुद्दीन अहमद द्वारा जिस संशोधन की सूचना दी गई है वही इन बातों में सुधार करेगा अर्थात् निर्वाचन के पूर्व जनगणना की जाये। यदि उस संशोधन से यही प्रयोजन है तब तो मैं समझता हूं कि वह संशोधन स्वीकार करने योग्य है।

जब हमने अव्यवहित निर्वाचन की प्रणाली को अस्वीकार कर दिया है, तो मैं समझता हूं कि विभिन्न प्रान्तों द्वारा प्रधान के निर्वाचन की यह प्रणाली ठीक होगी। मैं अव्यवहित निर्वाचन को श्रेय देता, जिसमें प्रत्येक मतदाता प्रधान के निर्वाचन हेतु प्रत्यक्ष मत द्वारा मतदान करता। यद्यपि प्रधान को कोई अधिकार नहीं है, फिर भी उसकी महान् प्रतिष्ठा होगी। यह सच है कि हमारा प्रधान इंग्लैंड के राजा का प्रतिरूप होगा। यदि इंग्लैंड में राजा की प्रतिष्ठा प्रधान-मंत्री से बहुत अधिक है तो मेरे विचार से हमारे प्रधान की भी वही प्रतिष्ठा होनी चाहिये। मैं समझता हूं कि यही एक रीति है जिसके अनुसार आप ऐसा निर्वाचन कर सकते हैं, जिसमें प्रत्येक प्रान्त के मतदाता भाग ले सकें। मैं समझता हूं कि कम से कम इस धारा पर तो विद्वान् डॉक्टर (अम्बेडकर) द्वारा पुनर्विचार किया जायेगा, और जिस प्रणाली की मैंने सिफ़ारिश की है, उसको अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली के स्थान में रखा जायेगा।

***श्री आर.के. सिधवा** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): उपाध्यक्ष, श्रीमान्, इस अनुच्छेद का दो महत्वपूर्ण बातों से सम्बन्ध है। पहली बात एकल-संक्राम्य मत द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली के अनुसार प्रधान के निर्वाचन से सम्बन्धित है और दूसरी बात जनसंख्या के अंकों से सम्बन्धित जनगणना के बारे में है, जिसके अनुसार विभिन्न राज्यों का प्रतिनिधान नियत किया जाना है।

[श्री आर.के. सिधवा]

श्रीमान्, मेरा विचार है कि एकल-संक्राम्य मत-प्रणाली, जिसका प्रचलन किया गया है, सर्वोत्तम प्रणालियों में से है। किसी उम्मीदवार के निर्वाचन के लिये यह प्रणाली मतदाता को प्रथम, द्वितीय और तृतीय विकल्प का अधिकार देती है। परन्तु एक बात है कि एकल-संक्राम्य मत-प्रणाली वहीं संतोषजनक रूप में क्रियान्वित होगी जहां कि एक स्थान से अधिक स्थान हों। यहां एक ही प्रधान के निर्वाचन का विषय है। अत: यद्यपि मैं समझता हूं कि यह प्रणाली बड़ी अच्छी है फिर भी यदि हम एकल-संक्राम्य मत-प्रणाली को स्वीकार कर लें जिसका कि हमें अनुभव भी यथेष्ट है तो उससे अनेकों कठिनाइयां तथा जटिल समस्यायें खड़ी हो जायेंगी। प्रधान के निर्वाचन के लिये मैं परित्यजन रीति को श्रेय देता। उसके द्वारा भी प्रत्येक मतदाता को मत देने का अधिकार होगा और जिस उम्मीदवार को सबसे अधिक मत मिलेंगे उसका निर्वाचन किया जायेगा। उदाहरणार्थ, यदि पांच उम्मीदवार हैं तो जिस उम्मीदवार को सब से कम मत मिलते हैं उसको सूची से निकाल दिया जाता है। तत्पश्चात् समस्त मतदाता शेष चार उम्मीदवारों के लिये फिर मतदान करते हैं और जिसको भी सब से कम मत प्राप्त होते हैं उसको निकाल दिया जाता है। और फिर शेष तीन उम्मीदवारों के लिये समस्त मतदाता मतदान करते हैं। अन्त में समस्त मतदाता शेष दो उम्मीदवारों के लिये अपना-अपना मत देते हैं। इसका यह अभिप्राय है कि प्रत्येक मतदाता प्रत्येक उम्मीदवार के लिये अपने अधिकार का प्रयोग करता है। प्रधान के निर्वाचन में मैं स्वयं इस परित्यजन की प्रणाली को श्रेय देता हूं जिसको काम में लाना वास्तव में लाभदायक तथा दक्षतापूर्ण है। मेरा विचार है कि एकल-संक्राम्य मत-प्रणाली संतोषजनक रूप से नहीं क्रियान्वित की जा सकेगी जब तक कि एक से अधिक स्थान न हों और जब तक कि छोटे अल्पसंख्यक-वर्ग के उम्मीदवार के निर्वाचन की संभावना न हो।

श्रीमान्, जनगणना का विषय बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है और मैं समझता हूं कि जिस प्रश्न को मेरे माननीय मित्र श्री ठक्कर बापा ने उठाया है उसकी उपेक्षा नहीं की जानी चाहिये। इस विषय पर अनेकों माननीय सदस्य बोल चुके हैं और हम सब यह जानते हैं कि विभाजन के पश्चात् कुछ प्रान्तों में सन् 1941 की जनगणना के अंकों का प्रयोग वास्तव में संतोषजनक नहीं होगा। मैं आपको एक उदाहरण दूंगा। सिंध में तेरह लाख आदमी थे। दो लाख आदमियों को छोड़

कर, जो वहां हैं और जो परिवहन के अभाव के कारण नहीं लाये जा सके, 13 लाख सिन्धी देश के विभिन्न भागों में फैले हुये हैं। इनमें से चार लाख बम्बई में हैं और लगभग ढाई लाख संयुक्तप्रान्त में हैं। मैं आपको यह बता दूं कि उनमें से बहुत से अजमेर तथा अन्य विभिन्न राज्यों में हैं। मैं आपको यह भी बता दूं कि अजमेर की जनसंख्या में 45 प्रतिशत सिन्धी हैं। राजपूताना के राज्यों में, जयपुर और जोधपुर में लगभग दो लाख सिन्धी हैं। फिर हम सन् 1941 की जनसंख्या पर किस प्रकार विश्वास कर सकते हैं? और फिर सन् 1941 की जनसंख्या के अंक दोषपूर्ण हैं? युद्ध के कारण तत्सम्बन्धी सरकार द्वारा यह आज्ञा निकाली गई थी कि बहुत ही साधारण रूप में जनगणना की जाये। यदि आप सन् 1931 और उससे पूर्ववर्ती जनगणना को देखें, तो आपको विदित होगा कि सब खानों को पूरा-पूरा भरा जाता था, जिससे यह अनुमान हो जाता था कि हमारी जनगणना में कौन-कौन हैं। सन् 1941 की जनसंख्या में आधे खाने तो उड़ा दिये गये। इसका प्रभाव विभिन्न प्रान्तों की जनसंख्या पर पड़ा। अतः मैं समझता हूं कि यदि सन् 1941 की जनसंख्या को मान लिया गया तो विशेषकर उन चार या पांच प्रान्तों के लिये, जिनमें शरणार्थी पहुंचे हैं, वह बड़ी ही घातक नीति सिद्ध होगी। मैं मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन का वास्तविक अर्थ नहीं जानता हूं। संशोधन में कहा गया है "कि अन्तिम जनगणना जिसके अंक प्रकाशित हो चुके हैं"। यदि यह मान लिया जाय कि निर्वाचन सन् 1950 में होगा तो अन्तिम अंक सन् 1941 की जनसंख्या के होंगे। मैं इस बात को स्पष्ट कराना चाहूंगा कि "अन्तिम जनगणना जिसके अंक प्रकाशित हो चुके हैं" पद का क्या अर्थ है। सन् 1941 की जनसंख्या के अन्तिम अंक वर्तमान हैं। मेरा विचार है कि निर्वाचन के पूर्व जनगणना होनी चाहिये, विशेषकर उन प्रान्तों की जिनमें शरणार्थी पहुंचे हैं। अन्यथा, मैं समझता हूं कि यदि उनके निर्दोष होने पर भी सन् 1941 की जनगणना को मान कर उन्हें मत देने के अधिकार से वंचित किया गया तो उनके साथ बड़ा अन्याय होगा। श्रीमान्, मैं समझता हूं कि यह बड़ा ही महत्वपूर्ण विषय है। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन जटिल समस्यायें उत्पन्न करता है और उसको स्पष्ट करने की आवश्यकता है।

***श्री एच.वी. कामत** (मध्य प्रान्त और बरार : जनरल): उपाध्यक्ष, हमारे

[श्री एच.वी. कामत]

मान्यवर सहयोगी श्री ठक्कर बापा ने जिस तर्क को प्रस्तुत किया है तथा हमारे मित्र पंडित लक्ष्मीकान्त मैत्र ने उसका योग्यतापूर्ण समर्थन किया है उसी तर्क को पुष्ट करने के लिये मैं खड़ा हुआ हूं। यह साधारण ज्ञान का विषय है कि सन् 1941 की जनगणना विचित्र परिस्थितियों के अन्तर्गत की गई थी। एक बड़ा भयंकर विश्वयुद्ध हो रहा था, लाखों व्यक्ति बेघर हो गये थे और केवल हमारे ही देश में नहीं वरन् समस्त संसार में तितर-बितर हो गये थे। यह एक बात थी जिसके कारण सन् 1941 की जनगणना गलत हुई। उसके पश्चात् जल्दी-जल्दी एक के पश्चात् दूसरे दु:ख और आपत्तियां हम पर पड़ीं। चार वर्ष तक वह युद्ध रहा और युद्ध के मध्यकाल में दुर्भिक्ष पड़ा और युद्ध के पश्चात् ही देश का विभाजन हुआ। इन आपत्तियों के कारण लाखों की तादाद में लोग अपनी जगह से उखाड़ दिये गये, बहुत से लोगों का नाश हुआ और देश के एक भाग से दूसरे भाग को अनेकों व्यक्ति चले गये। यदि हम आगामी निर्वाचन में लोगों के साथ न्यायोचित व्यवहार करना चाहते हैं और उनको ठीक-ठीक प्रतिनिधान देना चाहते हैं तो यह आवश्यक है कि निर्वाचन के पूर्व ठीक-ठीक जनगणना की जाये।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** आप विशेष जनगणना कर सकते हैं। बिना अंकों के आप किस प्रकार आगे बढ़ सकते हैं। मेरा ध्यान अंकों की ओर आकृष्ट किया गया था, न कि सन् 1941 की जनगणना की ओर।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं इस बात की ज़िद नहीं करता हूं कि निर्वाचन के पूर्व नियमित जनगणना की जाये, परन्तु हमारे पास केवल इसी अनुच्छेद के लिये ही अंक नहीं होने चाहियें वरन् वे अंक भी होने चाहियें जो उन समुदायों से सम्बद्ध हैं, जिनके लिये कि संविधान व्यवस्था करता है और जिनके लिए कि आरक्षण रखे जाने के लिये हम भी चिन्तित हैं। उदाहरणार्थ अनुसूचित समुदाय और मुसलमानों के लिये संरक्षण करने वाले आरक्षणों के लिये अंक होने चाहियें। जब तक हमें इन समुदायों की जनसंख्या न मालूम हो जिनके लिए विधान-मंडल में संरक्षण किया जायेगा, तब तक हम इन समुदायों के लिये किस प्रकार स्थानों की संख्या नियत कर सकते हैं। कुछ क्षेत्रों में यह आशा की जाती है कि कदाचित् शीघ्र ही जो लोग पाकिस्तान से भारत आये हैं और भारत से पाकिस्तान गये हैं वे फिर अपने-अपने निवास-स्थानों को चले जा सकेंगे। मेरे विचार से

ऐसी आशा करना व्यर्थ है और मैं नहीं समझता हूं कि निकट भविष्य में स्थिति पूर्ववत् हो सकेगी। श्रीमान्, मुझे याद है कि इस सम्बन्ध में गतवर्ष जब कि इस सभा में प्रान्तीय विधान पर वाद-विवाद हो रहा था, मेरे मित्र श्री खांडेकर ने अनुसूचित जातियों के बारे में यही प्रश्न उठाया था। उन्होंने कहा कि सन् 1941 ई. में हरिजनों की गणना दोषयुक्त थी और कम की गई थी और इस कारण वे चाहते थे कि आगामी निर्वाचन के पूर्व समस्त भारत की पुनः जनगणना की जाये। मेरी समझ में यह बात केवल हरिजनों के लिए ही लागू नहीं होती वरन् सब समुदायों के लिये लागू होती है और वह इसलिये कि नये विधान के अन्तर्गत विधान-मंडल में उनका ठीक-ठीक प्रतिनिधान होना चाहिए। श्री खांडेकर को उत्तर देते हुए, यदि मुझे ठीक-ठीक याद है तो, सरदार पटेल ने वचन तो नहीं दिया था परन्तु उन्होंने श्री खांडेकर तथा अन्य लोगों को अपने विचारों द्वारा यह आश्वासन दिया था कि इस विषय पर उचित ध्यान रखा जायेगा और ठीक विचार किया जायेगा। और यह भी कहा था कि निर्वाचन के पूर्व हम देश के विभिन्न समुदायों की ठीक-ठीक जनसंख्या निश्चित करने का पूरा प्रयत्न करेंगे। मेरे मित्र श्री अलगूराय शास्त्री ने अभी उस दिन इसी परिषद् में सिन्धी हिन्दुओं का कोई भी प्रतिनिधि न होने का उल्लेख किया था। यह एक बड़ी ही अव्यवस्था है कि विभाजन के पश्चात् पूर्वी पंजाब के गैर-मुसलमान अर्थात् हिन्दुओं और पश्चिमी बंगाल के हिन्दुओं के प्रतिनिधान पर फिर से विचार किया गया—इन लोगों के पश्चिमी पंजाब से पूर्वी पंजाब और पूर्वी बंगाल से पश्चिमी बंगाल में आने पर उनके प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ाई गई—पर सिन्ध बेचारा रह गया। सिन्ध का इस समय न तो इस परिषद् में ही कोई प्रतिनिधि है और न पाकिस्तान विधान-परिषद् में ही। उनके लिये जो एक स्थान नियत किया गया था वह भी नहीं रहा क्योंकि सिन्ध से जो हिन्दू भारत में आये, वे सब तितर-बितर हो गये। कुछ बम्बई में हैं और कुछ मध्यप्रान्त में और बाकी के सम्बन्ध में मैं नहीं जानता हूं कि वे कहां गये। अतः किसी भी प्रान्तीय परिषद् के लिये अपने प्रान्त से किसी सिन्धी का निर्वाचन करना कठिन है क्योंकि हमारी प्रतिनिधान की प्रणाली के अनुसार इस परिषद् में एक प्रतिनिधि भेजने के लिये कम से कम दस लाख व्यक्ति होने चाहियें। चाहे जो कुछ भी हो परन्तु आगामी निर्वाचन के पूर्व हमें इन सब लोगों की गणना कर लेनी चाहिये जो सिन्ध या पश्चिमी पंजाब या पूर्वी बंगाल या सीमा प्रान्त से भारत में आये हैं। जब तक हमारे पास इन बड़े-बड़े

[श्री एच.वी. कामत]

समूहों में आने वाले लोगों का, जिसका उदाहरण हमारे वर्तमान इतिहास में नहीं है, सही हिसाब नहीं होगा, तब तक ठीक-ठीक जनगणना के पूर्व निर्वाचन करने से अपने देश के लोगों के साथ अन्याय तथा अनुचित व्यवहार होगा। यदि नियमित जनगणना न हो सके तो जैसा कि मेरे मित्र ने सुझाया है एतदर्थ जनगणना तो कर ही ली जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उपाध्यक्ष, श्रीमान्, मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने जो संशोधन पेश किया है उस संशोधन संख्या 1083 पर सूची 1 के संशोधन 25 को मैं स्वीकार करता हूं। मुझे खेद है कि अन्य संशोधनों को मैं स्वीकार नहीं कर सकता। श्रीमान्, सामान्य वाद-विवाद के अन्तर्गत दो प्रश्न उठाये गये हैं। एक प्रश्न मि. नज़ीरुद्दीन अहमद का संशोधन है। अनेकों वक्ताओं द्वारा यह बताया गया है कि गत जनगणना अर्थात् सन् 1941 की जनगणना के आधार पर किसी निर्वाचन का करना बहुत ही गलत होगा। मुझे विश्वास है कि इस विषय पर अनेकों वक्ताओं ने जो कुछ कहा है उसमें बहुत सार है। यह सच है कि कुछ क्षेत्रों में सन् 1941 की जनगणना किसी न किसी प्रकार से गलत जनगणना थी। कुछ समुदायों के पक्ष में और कुछ अन्य समुदायों के विरोध में तत्कालीन स्थानीय सरकार ने जनगणना को गलत रूप दिया था। इसके अतिरिक्त यह भी उतना ही सत्य है कि भारत के विभाजन के पश्चात् उसके कुछ प्रान्तों में उदाहरणार्थ पूर्वी पंजाब, बम्बई, पश्चिमी बंगाल और कुछ हद तक संयुक्तप्रान्त में भी जनसंख्या और साम्प्रदायिक अनुपात में बहुत परिवर्तन हो गया है। इस बात को विचार में रखते हुये कि विधान विभिन्न सम्प्रदायों का अपनी-अपनी जनसंख्या और सामान्य जनसंख्या के अनुपात के अनुसार प्रतिनिधान करने की व्यवस्था करता है, यह आवश्यक है कि केवल प्रत्येक विशिष्ट प्रान्त की समस्त जनसंख्या को ही सुनिश्चित नहीं किया जाये, वरन् विधान में निर्वाचन के विषय को निश्चित करने के पूर्व जिन विभिन्न सम्प्रदायों को प्रतिनिधान देने की हमने प्रत्याभूति दी है, उनके अनुपात का भी उनकी जनसंख्या के अनुसार सुनिश्चय किया जाये।

मुझे इस बात में सन्देह नहीं है कि निर्वाचन के पूर्व ठीक-ठीक जनगणना करने के पक्ष में जो अनेकों तर्क प्रस्तुत किये गये हैं, सरकार उन पर ध्यान देगी। यदि मुझे आज्ञा हो तो मैं यह कहूंगा कि मेरे मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के

संशोधन को स्वीकार करने के लिये प्रेरित करने वाले कारणों में से एक यह है कि उन्होंने 'last' (गत) शब्द को श्रेय न देकर 'latest' (अन्तिम) शब्द का प्रयोग किया है। मैंने सोचा कि 'last' (गत) शब्द में एक प्रकार की स्थानीयता का बोध होता है कि गत जनगणना से उस नियत काल के पश्चात् की गई जनगणना का आशय है, जो प्रत्येक दस वर्ष बाद होती है और अन्तिम गत जनगणना से उस जनगणना का बोध होता है जो निर्वाचन आरम्भ करने के पूर्व की गई हो।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैंने उन शब्दों का प्रयोग नहीं किया। मैंने "last preceding census" (अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना) कहा था।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** खैर, जो कुछ उन्होंने कहा उस पर मैंने अधिक ध्यान नहीं दिया। पर मेरा यह विचार अवश्य है कि नये विधान-मण्डल के लिये निर्वाचन आरम्भ करने के पूर्व सरकार के नई जनगणना करने में यह खण्ड कोई रुकावट नहीं डालता है। मैं समझता हूं कि इस बात से उन अनेकों सदस्यों को संतोष हो जायेगा जिनको इस विषय पर शंका है।

***श्री महावीर त्यागी:** क्या मैं यह मान लूं कि आप यह आश्वासन देते हैं कि इस प्रकार की जनगणना की जायेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं आश्वासन तो नहीं दे सकता, परन्तु विभिन्न प्रान्तों की समस्त जनसंख्या और उसके स्वरूप में जो महान् परिवर्तन हुये हैं, उनकी कोई भी सरकार उपेक्षा नहीं कर सकती। हमने जनसंख्या के एक बड़े भाग के प्रतिनिधान की प्रत्याभूति की है जिसमें अनेकों अल्पसंख्यक-वर्ग हैं। जैसा कि माननीय सदस्यों को विदित है पासंग के विषय पर बहुत वाद-विवाद हो चुका है और हम जानते हैं कि पासंग नहीं दिया गया है। यदि हम अब निर्वाचन करें और वर्तमान जनसंख्या के आधार पर स्थान नियत करें, जब कि स्थानान्तरण के कारण वह आधार रहा ही नहीं है, तो उसका फल यह होगा कि अनेकों समुदायों को पासंग मिल जायेगा और कुछ समुदायों को कोई प्रतिनिधान न मिलेगा। यह स्पष्ट है कि इस प्रकार की बातों से बचने के लिये और यह देखने के लिये कि किसी भी समुदाय को कैसा भी पासंग नहीं मिले, नि:सन्देह सरकार को यह देखना होगा कि जनगणना सही जनगणना है।

***पं. लक्ष्मीकान्त मैत्र:** मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या माननीय सदस्य का यह आशय है कि नये विधान के अनुसार तब तक निर्वाचन न किया जायेगा जब तक कि जनगणना न कर ली जाये।

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर: मुझे तो यह केवल एक स्वाभाविक-सा परिणाम प्रतीत होता है क्योंकि निर्वाचन के लिये तब तक स्थान नियत नहीं किये जा सकते जब तक कि विभिन्न समुदायों की जनसंख्या को निश्चित न कर लिया जाय। अत: मुझे तो यह तर्कयुक्त परिणाम प्रतीत होता है और लगता है कि नई जनगणना करना अनिवार्य होगा।

दूसरा प्रश्न जिस पर श्री त्यागी, बेगम ऐज़ाज रसूल और कुछ अन्य सदस्यों ने जोर दिया है वह प्रधान के निर्वाचन के सम्बन्ध में है। प्रधान के निर्वाचन की दो रीतियां हैं। एक यह है कि उसका निर्वाचन उस रीति से किया जाय जिसे सभा के कोरे बहुमत के नाम से कहा जाता है। यदि किसी व्यक्ति को 51 प्रतिशत मत मिल जाते हैं तो उसका निर्वाचन हो जाये। प्रधान के निर्वाचन की यह एक रीति है और वह सीधी-सादी रीति है। इस रीति में यह हो सकता है कि बहुसंख्यक दल को यह शक्ति प्राप्त होगी कि वह प्रधान निर्वाचित करे और प्रधान के निर्वाचन में अल्पसंख्यक दल की कोई भी आवाज़ नहीं होगी। यह स्पष्ट है कि इस सभा का कोई भी सदस्य यह नहीं चाहेगा कि कोरे बहुमत से प्रधान का निर्वाचन किया जाये अथवा किसी ऐसी प्रणाली द्वारा उसका निर्वाचन किया जाये जिसमें अल्पसंख्यक-वर्ग कोई भाग न ले सके। इस कारण कोरे बहुमत द्वारा प्रधान के निर्वाचन का परित्याग करना पड़ा और हमें प्रधान के निर्वाचन की एक ऐसी व्यवस्था करनी पड़ी जिसमें अल्पसंख्यक-वर्गों की भी कुछ आवाज हो। प्रधान के निर्वाचन में अल्पसंख्यक-वर्गों को कुछ अधिकार देने की केवल रीति यही है कि निर्वाचक समूह पृथक् हों और यह व्यवस्था की जाय कि प्रधान को केवल बहुमत ही प्राप्त न हो परन्तु प्रत्येक अल्पसंख्यक-वर्ग से भी उसे कुछ मतों की संख्या प्राप्त हो। परन्तु फिर इसमें एक ऐसी बात आती है जिसे हम स्वीकार नहीं कर सकते क्योंकि हमने विधान में यह निर्धारित किया है कि पृथक् निर्वाचक समूह नहीं होंगे। अत: केवल यही रीति शेष रही कि निर्वाचन की कोई ऐसी प्रणाली रखी जाये। जिसमें अल्पसंख्यक-वर्गों का कुछ हाथ हो और वे भी भाग ले सकें और वह नि:सन्देह अनुपाती प्रतिनिधान की ही प्रणाली है जिसको विधान में निर्धारित किया गया है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** संक्राम्यता तो होगी ही। जब केवल एक ही व्यक्ति का निर्वाचन किया जाता है तो अनुपाती प्रतिनिधान किस प्रकार हो सकता है?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इस प्रश्न के विवरण को मैं नहीं ले सकता हूं। ऐसा करने के लिये मुझे एक कक्षा खोलनी पड़ेगी और इस विषय पर भाषण देना होगा। इस कार्य का भार मैं इस समय नहीं ले सकता हूं। यह प्रणाली विख्यात है और प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि यह किस प्रकार क्रियान्वित की जाती है।

***उपाध्यक्षः** इन बाधाओं से यह विदित होता है कि कुछ सदस्य अनुपाती प्रतिनिधान के वास्तविक स्वरूप को ही नहीं जानते हैं। आप इन बाधाओं की ओर ध्यान न दें।

***मौलाना हसरत मोहानीः** यदि केवल एक ही सदस्य हो तो आप क्या करेंगे?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** यदि एक ही सदस्य है तो उसका सर्वसम्मति से निर्वाचन हो जायेगा, (*हंसी*) और बहुसंख्यक-वर्ग तथा अल्पसंख्यक-वर्ग का प्रश्न ही नहीं उठेगा।

दूसरा प्रश्न जो श्री त्यागी ने पूछा था वह यह था कि उम्मीदवारों को हटा देने की कोई कार्यप्रणाली है या नहीं।

***श्री महावीर त्यागीः** श्रीमान्, एक सूचना-सम्बन्धी प्रश्न है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** नहीं, मैं नहीं मान सकता हूं। मैं आपके प्रश्न का उत्तर दे रहा हूं। आपका प्रश्न यह था कि जिस निर्वाचन की व्यवस्था की गई है क्या उसमें कोई परित्यजन की भी विधि है या नहीं। मेरा उत्तर यह है कि जी हां है, अनुपाती प्रतिनिधान में परित्यजन निहित है। अन्यथा उसमें कोई सार नहीं। हमने केवल यही किया है कि अनेकों अनुपाती प्रतिनिधान के स्थान में केवल एक अनुपाती प्रतिनिधान की व्यवस्था की है जिसमें नीचे से प्रत्येक उम्मीदवार को हटाया जाता रहेगा, जब तक कि केवल एक ही व्यक्ति न रह जाय जिसको कि निर्धारित भाग मिला है।

***श्री महावीर त्यागीः** परन्तु संसद् में वैकल्पिक मत की प्रणाली को अंगीकार किया जाता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वैकल्पिक अनुपाती का दूसरा नाम मात्र है।

श्रीमान्, इस विषय पर मुझे और अधिक कुछ नहीं कहना है।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं जानना चाहता हूं.....।

***उपाध्यक्ष:** श्री त्यागी, मेरी कठिनाई यह है कि मैं मसौदा-समिति के अध्यक्ष को आपके प्रश्नों का उत्तर देने के लिये बाध्य नहीं कर सकता। और न मैं आपकी शंकाओं का समाधान करने के लिये उन्हें बाध्य कर सकता हूं।

मैं एक-एक करके इन संशोधनों पर मत ले रहा हूं। प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ग) में 'such members' (इन सदस्यों) शब्दों के स्थान में 'the elected members of both Houses of Parliament' (संसद् के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1078। प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (3) के स्थान में निम्न खण्ड रखा जाये:

'(3) The election of the President shall be held by secret ballot and in accordance with the system of majority preferential voting by the single alternative vote.'"

[(3) प्रधान का निर्वाचन एकल वैकल्पिक मत के आधार पर बहुमत श्रेयदायक मतदान की पद्धति के अनुसार गूढ़-शलाका द्वारा होगा।]"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1079। प्रश्न यह है:

"कि अनुच्छेद 44 के खण्ड (3) में से 'in accordance with the system of proportional representation' (अनुपाती प्रतिनिधान

रीति के अनुसार) शब्दों को निकाल दिया जाये।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 44 की व्याख्या के स्थान में निम्न व्याख्या रखी जाये:

'Explanation—In this article, the expression "population" means the population as ascertained at the last preceding census of which the relevant figures have been published.'"

(*व्याख्या*—इस अनुच्छेद में "जनसंख्या" से अन्तिम पूर्ववर्त्ती जनगणना में निश्चित की गई जनसंख्या अभिप्रेत है जिसके अंक प्रकाशित हो चुके हैं।)

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:**-प्रश्न यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 44 विधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 44 विधान में प्रविष्ट किया गया।

अनुच्छेद 45

***उपाध्यक्ष:** सम्बन्धित माननीय सदस्य संशोधन संख्या 1084 पेश कर सकते हैं। मैं माननीय सदस्यों से यह आशा करता हूं कि जितना संक्षेप में वे बोल सकें उतना संक्षेप में बोलें जिससे कि आज के वादानुवाद को समाप्त करने के पूर्व हम इस अनुच्छेद को समाप्त कर सकें। परन्तु इसका अभिप्राय यह नहीं है कि मैं किसी व्यक्ति से न बोलने या जिन महत्त्वपूर्ण बातों को वे रखना चाहते हैं, उनको न रखने के लिये कह रहा हूं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, माननीय सदस्य के संशोधन का सार वही है जो कि इस अनुच्छेद का है और खण्ड के एक विशेष भाग से सम्बन्ध

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

रखता है न कि उसके परादिकों से। क्या इस संशोधन को पेश करने में माननीय सदस्य का कोई उद्देश्य है?

***श्री मोहम्मद ताहिर:** संशोधन के अर्थ और अनुच्छेद में अन्तर है और मैं बताऊंगा कि क्या है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** वह किसी रूप में भी संशोधन नहीं है: उसमें केवल शब्दों को इधर-उधर कर दिया गया है। अर्थ में कोई भी अन्तर नहीं है।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** कुछ अन्तर है·····।

***उपाध्यक्ष:** मैं किसी भी माननीय सदस्य के मार्ग में बाधा नहीं डालना चाहता हूं परन्तु इस संशोधन में कुछ अधिक सार नहीं प्रतीत होता है। फिर भी माननीय सदस्य उसे पेश कर सकते हैं।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं कि अनुच्छेद 45 के विशिष्ट भाग के स्थान में निम्न रखा जाये:

"The term of office of the President shall be five years from the date the President enters upon the Office."

(प्रधान के पद-प्रवेश की तिथि से प्रधान की पद-अवधि पांच वर्ष की होगी)

अभी यह प्रश्न उठाया गया था कि जिस रूप में यह अनुच्छेद है उसमें और इस संशोधन में कोई अन्तर नहीं है। पहले मैं अनुच्छेद के सम्बन्ध में कहूंगा। उसमें कहा गया है कि 'The President shall hold office for a term of five years from the date on which he enters upon his Office' (प्रधान अपनी पद-प्रवेश तिथि से पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा।) मान लीजिये कि प्रधान का निर्वाचन सामान्य निर्वाचन के और संसद् के निर्माण के पश्चात् सन् 1950 में होता है, यदि 1951 या 1952 में प्रधान के पद में आकस्मिक रिक्त, स्थान हो जाता है, तो उस दशा में प्रधान पांच वर्ष तक पद धारण करेगा अर्थात् वह सन् 1951 से 1955 तक पद धारण करेगा और संसद् जिसका कि निर्माण सन् 1950 में होता है, उसकी समाप्ति सन् 1954 में हो जायेगी। मेरे संशोधन का अर्थ है कि प्रधान पांच वर्ष की अवधि तक पद धारण

करेगा, जिससे यह आशय है कि यदि किसी प्रकार से आकस्मिक रिक्त-स्थान होता है अथवा प्रधान का निर्वाचन सन् 1950 में होता है और फिर सन् 1951 में आकस्मिक रिक्त-स्थान होता है, तो रिक्त-स्थान में जिस प्रधान का निर्वाचन होगा उसके पद की अवधि सन् 1954 में समाप्त हो जायेगी अर्थात् पांच वर्ष की वह अवधि जब कि संसद् समाप्त होती है। यह अन्तर मैंने इस अनुच्छेद और उसके इस संशोधन में रखा है।

अब प्रश्न यह उठता है कि मैंने इस संशोधन को क्यों पेश किया है। मेरे समक्ष केवल यही प्रश्न है। मैं चाहता हूं कि प्रधान के निर्वाचन अथवा सामान्य निर्वाचन पर किसी अधिकार-सम्पन्न प्राधिकारी का प्रभाव न होने पाये। निर्वाचन सदैव स्वतन्त्र तथा प्रजातन्त्रात्मक रूप में हो। उदाहरण के रूप में यदि आकस्मिक रिक्त-स्थान में किसी व्यक्ति को प्रधान चुन लिया जाता है और केन्द्र में संसद् की अवधि के समाप्त होने के पश्चात् भी वह पद धारण किये रहता है, तो इसका अर्थ यह होगा कि वह व्यक्ति जो प्रधान के पद पर होगा, सामान्य निर्वाचन और यहां तक कि प्रधान के निर्वाचन में भी सरलता से प्रभाव डाल सकेगा। श्रीमान्, मैं यह चाहता हूं कि सामान्य निर्वाचन अथवा प्रधान के निर्वाचन में किसी प्रकार से भी कोई प्रभाव न पड़े। अतः जिस रूप में यह अनुच्छेद है यदि उसका अभिप्राय यह है कि आकस्मिक रिक्त-स्थान में जिस प्रधान का निर्वाचन किया जाता है वह पांच वर्ष में से शेष अवधि तक के लिये ही पद धारण करे, तब तो मैं अपने संशोधन पर जोर नहीं दूंगा। परन्तु यदि इसका अभिप्राय यह है कि संसद् की पद-अवधि समाप्त हो जायेगी और प्रधान अपने पद को धारण करता रहेगा, तब मेरा संशोधन अवश्य रहेगा और मैं उस पर जोर दूंगा। इन शब्दों के साथ मैं संशोधन पेश करता हूं और आशा करता हूं कि स्थिति स्पष्ट की जायेगी।

(संशोधन संख्या 1085 पेश नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन 1086 को पेश करने की आज्ञा नहीं दी जाती है क्योंकि वह शाब्दिक संशोधन है।

संशोधन संख्या 1087 और 1088 समानार्थी हैं। डॉ. अम्बेडकर संशोधन संख्या 1087 पेश कर सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं: "कि अनुच्छेद 45 के परादिक (क) में 'resignation' शब्द के स्थान में 'writing' शब्द रखा जाये।"

***श्री मोहम्मद ताहिर:** उपाध्यक्ष, श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिकों के खण्ड (क) में 'Chairman of the Council of States and the Speaker of the House of the Poeple' (राज्य-परिषद् के सभापति और लोक-सभा के अध्यक्ष) शब्दों के स्थान में 'members of the Parliament' (संसद् के सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

मैं बहुत लम्बा भाषण नहीं दूंगा। मैं केवल यही निवेदन करना चाहता हूं कि संसद् के सदस्यों द्वारा निर्वाचित प्रधान यदि त्यागपत्र द्वारा अपना पद त्याग करना चाहता है तो उचित रूप से यही वांछनीय है कि वह अपना त्यागपत्र संसद् के सदस्यों को सम्बोधित करे न कि किसी अन्य व्यक्ति को। त्यागपत्र कार्यालय में दिया जाये अध्यक्ष को अथवा राज्य-परिषद् के सभापति को, परन्तु अपने त्याग-पत्र में वह संसद् के सदस्यों को सम्बोधित करे जिन्होंने उसका प्रधान के रूप में निर्वाचन किया है न कि किसी अन्य व्यक्ति को।

***उपाध्यक्ष:** इसके पश्चात् संशोधन संख्या 1090 श्री बी. एम. गुप्ते के नाम से है। उस पर उनका संशोधन भी साथ है (चौथा सप्ताह, सूची 1 संख्या 26)।

***श्री बी.एम. गुप्ते** (बम्बई : जनरल): मैं कुछ थोड़े परिवर्तित रूप में इस संशोधन को पेश करना चाहता हूं। परिवर्तन केवल रस्मी है। इस खण्ड की पुनर्व्यवस्था के सम्बन्ध में है। मैं उसको परिवर्तित रूप में पेश करने की आपसे तथा इस महान् सभा से अनुमति चाहता हूं।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभा श्री गुप्ते को अपना संशोधन कुछ परिवर्तित रूप में पेश करने की अनुमति देती है? यद्यपि इस समय इसकी प्रतियां सदस्यों को नहीं दी जा सकती हैं इसलिये श्री गुप्ते मूल संशोधन तथा उसके परिवर्तित स्वरूप को पढ़ें।

***माननीय सदस्य:** ठीक है।

***श्री बी.एम. गुप्ते:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि संशोधन संख्या 1090 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये:

(1) अनुच्छेद 45 को उसी अनुच्छेद के खण्ड (1) के रूप में पुन: अंकित किया जाये।

(2) इस प्रकार उपरोक्त खण्ड के पुनः अंकित परादिकों के खण्ड (क) में 'Chairman of the Council of States and the Speaker of the House of the People' (राज्य-परिषद् के सभापति और लोक-सभा के अध्यक्ष) शब्दों के स्थान में 'Vice-President' (उपप्रधान) शब्द रखा जाये।

(3) इस प्रकार पुनः अंकित अनुच्छेद में निम्न खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(2) Any resignation addressed to the Vice-President under clause (a) of the proviso to clause (1) of this article shall forthwith be communicated by him to the Speaker of the House of the Poeple.'

[(2) इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के परादिकों के खण्ड (क) के अन्तर्गत उप-प्रधान को सम्बोधित किसी भी त्यागपत्र की संसूचना उप-प्रधान द्वारा तत्काल लोक-सभा के अध्यक्ष को दी जायेगी।]"

श्रीमान्, विधान के मसोदे में वर्तमान रूप में यह खण्ड यह व्यवस्था करता है कि त्यागपत्र दो व्यक्तियों को सम्बोधित किया जायेगा, राज्य-परिषद् के सभापति को और लोक-सभा के अध्यक्ष को। यह स्पष्टतया असुविधाजनक है। अतः यह अच्छा होगा कि इस प्रकार का प्रावधान बनाया जाये कि त्यागपत्र एक ही व्यक्ति को भेजा जाये और रिक्त-स्थान की पूर्ति हेतु कार्यारम्भ करने के लिये वही उत्तरदायी हो। और इस कार्य के लिये सबसे उपयुक्त व्यक्ति उप-प्रधान ही है। अतः मैंने यह व्यवस्था की है कि उप-प्रधान ही त्यागपत्र ले। पर इसके साथ-साथ यह वांछनीय है, लोक-सभा का अध्यक्ष भी उससे परिचित हो जाये। इस कारण अनुवर्ती खण्ड द्वारा मैंने यह व्यवस्था की है कि उप-प्रधान तुरन्त ही त्यागपत्र की संसूचना लोक-सभा के अध्यक्ष को दे। अतः मैं आशा करता हूं कि यह संशोधन डॉ. अम्बेडकर तथा सभा को मान्य होगा।

***उपाध्यक्षः** क्या श्री कामत इस पर (चौथा सप्ताह, सूची 1 संख्या 27) संशोधन पेश करना चाहते हैं?

***श्री एच.वी. कामतः** नहीं, वह गुप्ते द्वारा अभी प्रेषित संशोधित संशोधन के अन्तर्गत आ जाता है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिकों के पैरा (क) में तथा अन्य स्थानों में जहां 'House of the People' (लोक-सभा) शब्द आये हों इन शब्दों के स्थान में 'National Congress' (राष्ट्रीय कांग्रेस) शब्द रखे जायें।"

श्रीमान्, भावी विधान में केन्द्र में दो आगार होंगे, लोकप्रिय आगार को लोक-सभा और उत्तर आगार को राज्य-परिषद् कहा जायेगा। मेरी प्रस्थापना यह है कि लोकप्रिय आगार का नाम राष्ट्रीय कांग्रेस रखा जाये जिसने देश को स्वतन्त्रता प्राप्त कराने में महान् कार्य किये हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** परन्तु कांग्रेस तो वास्तव में अब भी वर्तमान है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं राष्ट्रीय कांग्रेस के नाम को अमर रखना चाहता हूं और यह चाहता हूं कि स्वयं विधान में उसका नाम रख दिया जाये।

***उपाध्यक्ष:** मेरे विचार से आप सभा का समय न लें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं बहुत ही संक्षेप में बोलूंगा। गत साठ अथवा इससे भी अधिक वर्षों से स्वतन्त्रता का युद्ध हो रहा है और जयपुर अधिवेशन में डॉ. पट्टाभि सीतारमैया की अध्यक्षता में वह उच्च शिखर पर पहुंचने को है। मैं निवेदन करता हूं कि राष्ट्रीय कांग्रेस के संघर्षों और सेवाओं को सरकारी रूप से स्वीकार किया जाये और लोकप्रिय आगार का नाम उसके नाम पर रखा जाये।

मेरे पास अमरीका का उदाहरण है जहां विधान-मण्डल को कांग्रेस कहा जाता है। मैंने लोकप्रिय आगार का यह नाम रखना पसन्द किया है क्योंकि वह वास्तव में लोक-इच्छा का प्रतीक है। मैं विश्वास करता हूं कि यह एक ऐसा संशोधन है जो भावना पर आश्रित है।

***मौलाना हसरत मोहानी:** क्या आप कांग्रेस के सदस्य हैं?

***श्री एस. नागप्पा:** वे अब बनना चाहते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** किसी व्यक्ति के लिये यह आवश्यक नहीं है कि सत्य को मानने अथवा स्वीकार करने के लिये वह कांग्रेस का सदस्य हो।

***उपाध्यक्ष:** मैं आपसे यह चाहता हूं कि आप इस बात का ध्यान रखें कि हमारे पास केवल 20 मिनट ही रहे हैं।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** श्रीमान्, मैं निवेदन करता हूं कि केवल भावना-सम्बन्धी आधार पर इसको स्वीकार किया जाये। वास्तव में वर्तमान स्वतंत्रता की उच्चकोटि राष्ट्रीय कांग्रेस के खून, परिश्रम, आंसुओं और पसीने का प्रतीक है।

***उपाध्यक्ष:** क्या श्री कामत संशोधन संख्या 1092 को पेश करना चाहते हैं?

***श्री एच.वी. कामत:** इस पर गुप्ते द्वारा मेरे विचार पहले से ही प्रकट कर दिये गये हैं अत: उसके पेश करने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

(संशोधन संख्या 1093 और 1094 पेश नहीं किये गये।)

ज्ञानी गुरुमुख सिंह मुसाफिर (पूर्वी पंजाब : सिख): मेरा अमेंडमेंट यह है:

" 'That in clause 45 (b) of the proviso to article 45 after the words 'violation of the Constitution' the words 'or of law' be inserted.' "

(कि अनुच्छेद 45 के परादिक (ख) में 'संविधान' के पश्चात् 'अथवा विधि' शब्द प्रविष्ट किये जायें।)"

क्लॉज़ बी में प्रेज़िडेण्ट के मुतल्लिक यह कहा गया है:

"The President may for violation of the Constitution be removed from office by impeachment in the manner provided in artcile 50 of this Constitution."

(संविधान का अतिक्रमण करने पर प्रधान, इस संविधान के अनुच्छेद 50 में प्रावहित रीति से किये गये प्राभियोग द्वारा पद से निष्कासित किया जा सकेगा।)

[ज्ञानी गुरुमुख सिंह मुसाफिर]

लफ़्ज़ कान्स्टीट्यूशन के साथ लफ़्ज़ 'ला' (law) का आना भी बहुत जरूरी है। सिर्फ कान्स्टीट्यूशन के खिलाफ़ चलने पर ही नहीं बल्कि 'ला' (law) की खिलाफवर्ज़ी करने पर भी प्रेज़िडेण्ट के साथ इसी किस्म का बर्ताव होना चाहिए।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिक (ग) में 'term' (पद अवधि समाप्त हो जाने पर) शब्दों के पश्चात् 'or resignation as the case may be' (अथवा त्यागपत्र देने पर जैसी भी दशा हो) शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

इस परादिक से प्रधान, अपनी पदावधि समाप्त हो जाने पर भी अपने उत्तराधिकारी के पद-प्रवेशन तक पदारूढ़ रहेगा। मैं इस परादिक को उस स्थिति में भी लागू करना चाहता हूं जब कि वह अपनी सामान्य पदावधि के समाप्त होने के पूर्व पद-त्याग करता है। यह संशोधन करीब-करीब एक मसौदा-सम्बन्धी विचारणीय संशोधन है।

***उपाध्यक्ष:** चूंकि इस अनुच्छेद के सामान्य वाद-विवाद पर किसी भी सदस्य ने बोलने की इच्छा प्रकट नहीं की है मैं यह प्रस्ताव करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर से वादानुवाद का उत्तर देने के लिये निवेदन किया जाये। अभी मुझे एक परची मिली है जिसमें भाषण करने की प्रार्थना की गई है। वह बहुत देर बाद आई है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** श्रीमान्, मैं जिस संशोधन को स्वीकार कर सकता हूं वह श्री गुप्ते के संशोधन द्वारा संशोधित संशोधन संख्या 1090 है। औरों के लिये मुझे खेद है कि मैं उन्हें स्वीकार नहीं कर सकता हूं। ऐसा कोई प्रश्न किसी सदस्य ने नहीं उठाया है जिसके लिये किसी व्याख्या की आवश्यकता हो।

***उपाध्यक्ष:** मैं संशोधनों पर मत ले रहा हूं।

प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के विशिष्ट भाग के स्थान में निम्न रखा जाये:

'The term of office of the President shall be five years from the date the President enter upon the Office.'"

(प्रधान के पद-प्रवेश की तिथि से प्रधान की पद-अवधि पांच वर्ष की होगी।)

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिक (क) में 'resignation' शब्द के स्थान में 'writing' शब्द रखा जाये।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिकों के खण्ड (क) में 'Chairman of the Council of States and the Speaker of the House of the People' (राज्य-परिषद् के सभापति और लोक-सभा के अध्यक्ष) शब्दों के स्थान में 'members of the Parliament' (संसद् के सदस्यों) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधन संख्या 26 (क) द्वारा परिवर्तित रूप में संशोधन संख्या 1090 जो श्री बी.एम. गुप्ते के नाम से है उस पर मत लूंगा।

प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधन संख्या 1090 के स्थान में निम्न संशोधन रखा जाये:

(1) अनुच्छेद 45 को उसी अनुच्छेद के खण्ड (1) के रूप में पुन: अंकित किया जाये।

(2) इस प्रकार उपरोक्त खण्ड के पुन: अंकित परादिकों के खण्ड (क) में 'Chairman of the Council of States and the Speaker of the House of the People' (राज्य-परिषद् के सभापति और लोक-सभा के अध्यक्ष) शब्दों के स्थान में 'Vice-President' (उप-प्रधान) शब्द रखा जाये।

(3) इस प्रकार पुनरांकित अनुच्छेद में निम्न खण्ड जोड़ दिया जाये:

'(2) Any resignation addressed to the Vice-President under clause (a) of the proviso to clause (1) of this

[उपाध्यक्ष]

article shall forthwith the communicated by him to the Speaker of the House of the People.' "

[इस अनुच्छेद के खण्ड (1) के परादिकों के खण्ड (क) के अन्तर्गत उप-प्रधान को सम्बोधित किसी भी त्याग-पत्र की संसूचना उप-प्रधान द्वारा तत्काल लोक-सभा के अध्यक्ष को दी जायेगी।]"

संशोधन स्वीकार किया गया।

उपाध्यक्ष: प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिकों के पैरा (क) में तथा अन्य स्थानों में जहां 'House of the People' (लोक-सभा) शब्द आये हों इन शब्दों के स्थान में 'National Congress' (राष्ट्रीय कांग्रेस) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिक (ख) में 'violation of the Constitution (संविधान) के पश्चात् 'or of law' (अथवा विधि) शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 45 के परादिक (ग) में 'term' (पद-अवधि समाप्त हो जाने पर) शब्दों के पश्चात् 'or resignation as the case may be' (अथवा त्यागपत्र देने पर जैसी भी दशा हो) शब्द प्रविष्ट किये जायें।"

संशोधन अस्वीकार किया गया।

उपाध्यक्ष: प्रस्ताव यह है:

"कि संशोधित रूप में अनुच्छेद 45 विधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 45 विधान में प्रविष्ट किया गया।

***श्री टी. टी. कृष्णमाचारी:** आगे के अनुच्छेद पर केवल एक छोटा-सा संशोधन है।

अनुच्छेद 46

***उपाध्यक्ष:** अब हम इसके आगे के अनुच्छेद पर विचार करेंगे। सभा के विचारार्थ अनुच्छेद 46 प्रस्तुत है।

चूंकि संशोधन संख्या 1097 अनुच्छेद के निकालने के सम्बन्ध में है अत: मैं उसे पेश करने की आज्ञा नहीं देता हूं। चूंकि इस मूल संशोधन को नियमविरुद्ध कर दिया गया है, अत: प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना का इस संशोधन पर जो संशोधन है वह भी गिर जाता है।

***श्री कृष्णचन्द्र शर्मा** (संयुक्तप्रान्त : जनरल): श्रीमान्, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 46 में से 'once but only once' (एक बार, पर एक बार ही) शब्द निकाल दिये जायें।"

मेरा संशोधन बहुत सादा है। यह इस प्रभाव का है कि यदि कोई योग्य तथा दक्ष व्यक्ति मिलता है तो पुनर्निर्वाचन द्वारा और जब तक उसमें सेवा करने की योग्यता तथा दक्षता है, तब तक जनता को उसकी सेवाओं का लाभ उठाने के लिये दूसरी पदावधि के लिये क्यों न रखा जाये।

(संशोधन संख्या 1099 पेश नहीं किया गया।)

***श्री एच.वी. कामत:** उपाध्यक्ष, मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 46 में 'only once' (का पात्र होगा) शब्दों के पश्चात् 'but he shall not be so eligible if he has been removed from office by impeachment in the manner provided in article 50' (परन्तु यदि अनुच्छेद 50 में प्रावहित रीति से किये गये प्राभियोग द्वारा उसे पद से निष्कासित किया जाता है तो वह उसका पात्र न होगा) जोड़ दिये जायें।"

[श्री एच.वी. कामत]

यह अनुच्छेद जिस रूप में है उसी रूप में उस पर विचार करते हुये भी मैं समझता हूं कि किसी सीमा तक इस अनुच्छेद के विषय को स्पष्ट करने के प्रयोजन मात्र के लिये यह संशोधन आवश्यक है। परन्तु अब श्री कृष्णचन्द्र शर्मा द्वारा प्रस्तुत संशोधन को दृष्टि में रखते हुये हमारे लिये आवश्यक है कि हम इसे पूर्णतया स्पष्ट कर दें। यदि श्री शर्मा का संशोधन स्वीकार किया जाता है तो पहली या दूसरी पदावधि के कुछ वर्षों के पश्चात् कोई व्यक्ति प्रधान पद के लिये फिर चुनाव लड़ सकता है। इस संशोधन के विरूद्ध यह कहा जा सकता है कि जो कोई दल उम्मीदवार को नामज़द करेगा वह किसी ऐसे व्यक्ति को नामज़द नहीं करेगा जिसे प्राभियोग द्वारा पद से निष्कासित किया गया हो। परन्तु इन बातों को ध्यान में रखते हुए इस प्रकार का प्रावधान आवश्यक हो जाता है कि जनता बहुत ही अल्पकाल तक किसी बात को स्मरण रखती है और दल भी थोड़े समय तक ही स्मरण रखता है तथा संसार के अनेक देशों में ऐसे उदाहरण पाये जाते हैं कि जब लोग पहले की बातों को भूल जाते हैं तो वे लोग, जिन पर भ्रष्टाचार तथा अन्य नीच कार्यों का अभियोग चलाया गया है और जिनको इस सम्बन्ध में दोषी ठहराया गया है, कुछ समय पश्चात् किसी न किसी पद पर प्रतिष्ठित हो गये हैं। ऐसी बातें अनेकों देशों में हुई हैं और हमारे देश में भी ऐसी बातों के होने की कम सम्भावना नहीं है। ईश्वर क्षमा करें, जब कि दल की स्मरण शक्ति अल्पकालीन होती है तो वह इस बात को पूर्णतया नहीं रोक सकता कि अनेकों वर्षों के पश्चात् उसी व्यक्ति को फिर चुनाव लड़ने के लिये खड़ा न किया जाये जो भ्रष्टाचार तथा अन्य अपकार्यों का दोषी ठहराया गया था। अत: इस अनुच्छेद के समस्त प्रसंग को स्पष्ट करने के लिये ही मैंने यह संशोधन पेश किया है कि जिस व्यक्ति पर प्राभियोग किया गया हो वह किसी समय भी 5, 10 अथवा 20 वर्ष पश्चात् निर्वाचन के लिये खड़ा न हो सके। यह निर्धारण करना आवश्यक है, जिस व्यक्ति को प्राभियोग द्वारा पद से निष्कासित किया गया हो उसे भारतीय संघ के प्रधान पद के लिये चुनाव लड़ने का अधिकार नहीं होना चाहिये। फिर चाहे लोग इस बात को भूल ही क्यों न गये हों या उसकी उपेक्षा करना ही क्यों न चाहते हों।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, जिस संशोधन को मैं पेश कर रहा हूं यह बहुत साधारण है। मैं प्रस्ताव पेश करता हूं:

"कि अनुच्छेद 46 में निम्न परादिक लगा दिया जाये:

'Provided that it will not apply in the case of a Vice-President who holds or who has held such office only temporarily in an acting capacity.' "

(पर यह उस उप-प्रधान पर लागू नहीं होगा जिसने अस्थायी रूप में स्थानापन्न होकर पद-धारण किया हो अथवा कर रहा हो।)

यह अनुच्छेद इस बात की अनुमति देता है कि प्रधान द्वितीय बार पद-धारण कर सकता है। मेरा प्रश्न यह है कि जिस उप-प्रधान ने अस्थायी रूप में स्थानापन्न होकर पद-धारण किया हो अथवा जो उस समय कर रहा हो उसे प्रधान पद के निर्वाचन के लिये दुबारा खड़े होने से न रोका जाये। यदि उप-प्रधान के स्थानापन्न रूप में कार्य करने को पद-धारण करना नहीं समझा जाता है या उसका कुछ और अर्थ लिया जाता है तब तो मेरा संशोधन आवश्यक नहीं होगा। या तो डॉक्टर अम्बेडकर मेरे संशोधन को स्वीकार करें और या अपने भाषण में वे कृपा कर इस बात को स्पष्ट करें।

***उपाध्यक्ष:** यद्यपि यह अनुच्छेद बहुत ही छोटा और साधारण-सा है फिर भी अनेकों सदस्य इस पर बोलना चाहते हैं। मैं उनको बोलने से नहीं रोकना चाहता हूं पर मैं उनसे निवेदन करूंगा कि वे अपनी पर्चियां वापस ले लें। यदि वे एक थकी-थकाई सभा के समक्ष भाषण देने का आग्रह करते हैं तो मुझे विश्वास है कि जिस बात पर वे जोर देंगे उस पर समुचित विचार नहीं होगा। मेरे विचार गलत हो सकते हैं पर मेरे विचार हैं यही।

***एक माननीय सदस्य:** अपनी भाषण देने की प्रार्थना को हम वापस लेते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष, श्रीमान्, "एक बार, पर एक बार ही" शब्दों के हटाने के लिये जो श्री शर्मा का संशोधन संख्या 1098 है उसे स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूं।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

श्री कामत के संशोधन के सम्बन्ध में मैं समझता हूं कि इस विषय पर वाद-विवाद करने के लिये वह समय उपयुक्त होगा जब कि प्रधान पद के लिये खड़े होने वाले व्यक्ति की योग्यताओं का प्रश्न प्रस्तुत किया जायेगा।

श्री त्यागी से मैं यह कहूंगा कि "एक बार, पर एक बार ही" शब्दों के हटा देने से उपाध्यक्ष के सम्बन्ध में जो उनका भय है वह निराधार हो जायेगा।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं एक-एक करके संशोधनों पर मत लूंगा।

संशोधन संख्या 1098 । प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 46 में से 'once but only once' (एक बार, पर एक बार ही) शब्द निकाल दिये जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन संख्या 1100 ।

***श्री एच.वी. कामत:** डॉ. अम्बेडकर के कथन पर विचार करते हुये मैं इस संशोधन पर जोर नहीं देना चाहता हूं।

(परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** इसके पश्चात् श्री त्यागी का संशोधन है। डॉ. अम्बेडकर के भाषण के पश्चात् यह प्रश्न ही नहीं उठता है, परन्तु शायद कोई विधान-पंडित यह कहे कि मैंने उस पर मत नहीं लिया था। अत: मैं जानना चाहता हूं कि श्री त्यागी उसे वापस करना चाहते हैं या नहीं।

***श्री महावीर त्यागी:** श्रीमान्, मैं उसे वापस करना चाहता हूं।

(परिषद् की अनुमति से संशोधन वापस किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** प्रश्न यह है:

"कि संशोधन रूप में अनुच्छेद 46 विधान का अंग बने।"

प्रस्ताव स्वीकार किया गया।

संशोधित रूप में अनुच्छेद 46 विधान में जोड़ दिया गया।

***उपाध्यक्ष:** एक सुझाव है कि कुछ दिनों के लिये सभा स्थगित की जाये और इसका कारण आप सबको विदित ही है। वर्तमान नियमों के अनुसार अध्यक्ष को तीन दिन से अधिक काल के लिये सभा विसर्जन करने का अधिकार नहीं है। अत: मैं सभा से निवेदन करता हूं कि वह मुझ 14 दिनों के लिये सभा स्थगित करने की अनुमति दे अर्थात् सोमवार 27 दिसम्बर के 10 बजे प्रात:काल तक के लिये।

***श्री टी. टी. कृष्णमाचारी:** श्रीमान्, एक प्रस्ताव पेश किया जाये कि सभा 14 दिनों के लिये स्थगित की जाये।

***उपाध्यक्ष:** मैं इस बात की चिन्ता नहीं करता हूं कि आप उसे किस प्रकार से स्वीकार करेंगे। यदि जो कुछ आप कहते हैं वही कार्यप्रणाली है तो मैं उसके लिये बिल्कुल तैयार हूं और उस रूप का एक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाये।

***श्री सत्यानारायण सिन्हा** (बिहार : जनरल): आप सभा से यह पूछ सकते हैं कि क्या यह उसे मान्य है।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभा 14 दिनों के लिये स्थगित होने के पक्ष में है?

***माननीय सदस्य:** जी हां।

***उपाध्यक्ष:** सोमवार, 27 दिसम्बर के प्रात: 10 बजे तक के लिये सभा स्थगित की जाती है।

तत्पश्चात् सोमवर, 27 दिसम्बर सन् 1948 के प्रात: 10 बजे तक के लिये सभा स्थगित की गई।